जीवन के कुछ सूत्र है, जो आदर्श बनाय।
कर यथार्थ इनको मणी, दिव्य रूप तू पाय।।
सत्य, धर्म, परमार्थ ही, मातु, पिता और मित्र।
कष्ट-भंवर से मुक्ति दें, यदि मन में हो प्रभु चित्र।।
विष्णुः, तुलसी, गाय, व्रत एकादशी सत्संग।
ब्राहमण, गाय, सुकीर्ति हो, भव से मुक्ति प्रदंग।।
गोचर भू, गोदान या अभिवादन सम्मान।
गंग स्नान फल मिलत है, गौसेवा सम जान।।
धर्म, अधर्म के कृत्य सब, निश्चित ही फल देत।
गति धीमी या तीव्र हो अभी, आज, कल देत।।
बीज यथा, समय लगे, वृक्ष तथा फलवान।
ज्यों गरिष्ठ भोजन करे, उदर उपद्रव मान।।
कर्म करो रख धैर्य तुम, पूर्ण समर्पित लक्ष्य।
मित्र बनो सद्प्रेरणा, नहीं बनो मित् भक्ष्य।।
स्नान, ध्यान, पूजन, हवन, अध्ययन बिना उदास।
व्यर्थ दिवस वह मानिये, अतः रखो नित प्यास।।
नयनों की भाषा विकट, प्रेम, घृणा, उपहास।
अन्तरमन नैनन पढ़ो, शत्रु, मित्र आभास।।
माँ की ममता के नहीं कोई भी सम जान।
मात पिता को पूज कर ही बन सको महान।।

स्तुति, वन्दन, भाष मृदु, जिव्हा का परभाव।
सकल जगत को मित करे, सफल, सुमंगल चाव।।
जिनके सुमिरन मात्र से कष्ट सकल कट जाय।
सदा रखे जो ध्यान में तो सर्व सिद्ध सुख पाय।।
भावों के भूखे प्रभू, भाव जगत का खेल।
बिना भाव सब व्यर्थ है, सहित भाव हो मेल।।
वक्ता शैली में प्रमुख, नयन डालकर बात।
भाषा सहज प्रवाह में, दिल जीतो मुस्कात।।
भव सागर में उठ रहा, ज्वार भाट का द्वन्द।
जैसी जिसकी भावना, वैसा उसका छन्द।।
आयुर्यश, धन मित्र अरु सकल सुखों का ढ़ेर।
कलह आ गई अगर घर, हो जाओगे ढेर।।
गुण के ग्राहक जगत में, भले शत्रु का होय।
गुरु के भी दुर्गुण तजे, भयो सयानो सोय।।
रोग, द्वेष, मद, लोभ से रहते हरदम दूर।
उसे सिद्ध ही मानिये, काम, क्रोध भी दूर।।
काम, क्रोध, मद लोभ का पुतला है इन्सान।
जीते इन्हें विवेक से, कहलाता श्रीमान।।
जिनके मन में व्याप है, अखिल विश्व आधार।
लोभ, मोह, मद, कामना, से खुद विरक्त हो सार।।

ममता दुख का मूल है, हो निरपेक्ष स्वभाव।
ऊपेक्षा होती अगर, होते दिल में घाव।।
मर्यादा के टूटते रिश्ते होते भंग।
धर्म–कर्म सब छूटता, इस कारण से जंग।।
नहीं पूत से कुल चले, कर तू ऐसे काम।
माँ भारत, माँ भारती अरु समाज निष्काम।।
तेरा अपना कौन है, सोच जरा तू आज।
मतलब से सब ही मिले, अब कर प्रभु के काज।।
भाषा की माधुर्यता, अरु भाषामय ढंग।
दिल दिमाग हो अधर पर, दिखे प्रभावी रंग।।
होवे विनम्र स्वभाव वश, जीते सकल महान।
राघव नम्र स्वभाव ने, परशुराम से मान।।
शुभारम्भ वार्ता करे, अच्छे हों परिणाम।
सुन्दर अन्त प्रदानता, भावी सुन्दर काम।।
अपमानित कर किसी को नीचा नहीं दिखाय।
औरन के नजरों गिरो, उससे नफरत पाय।।
सम्बोधन में नाम का अपरम्पार महत्व।
हो जायेगा आपका इसमें ऐसा सत्व।।
ध्यान योग अभ्यास से गुंजित मनः तरंग।
दोनों जानें दोऊ को ऐसा मानस संग।।

मन ही मन जाने युगल, मन में क्यों अभिमान।
मन में प्रभु दर्शन दिया, मन में प्रभु का ध्यान।।
न माला न आरती, नहीं कर रहा शोर।
दिल में परहित भाव से, बंधी तुम्हारी डोर।।

ब्रह्मचर्य आश्रम प्रथा, बाद विवाह विचार।
बाल विवाह निषेध का, करते सदा प्रचार।।
नहिं दहेज की कुप्रथा, हो सप्रेम उपहार।
नव दम्पत्ति को शुभ भाव के, देकर कर उपकार।।
एकादश व्रत जो रहे, श्री धन, कीर्ति अपार।
आयुर्विद्या, यश बढ़े, मनवांछित हो सार।।

आयु, धन, रहस, कमी, मान और अपमान।
धन, मन्त्र अरु शत्रुता, का न करै बखान।।
भोजन, मैथुन, औषधी, अरु निज गृह के दोष।
रखें सदा निज हृदय में, इसमें ही सन्तोष।।
कर्ममय जीवन शतायू, श्रम बिना जीवन नहीं।
मित्र बन जा लोक के, सफलता पावन यहीं।।
पर द्रव्य, परदार पर नहीं रहा ललचाय।
शुद्धि, बुद्धि मन प्राण हो, ताको सत्य सुहाय।।
सतत अनवरत साधना, श्रम को ही तप मान।
सम्पत्ति, श्री, सद्बुद्धि भी, मिले सुकीर्ति सुजान।।
सत्य, धर्म ही ब्रहम है, माया मिथ्याकाश।
सूर्य सदृश चमके सदा, वरना तम का वास।।
सुख में साथी सकल जग, दुख में दिखे न कोय।
धर्म, सत्य अरु मनोबल, तीनहु सम्बल होय।।
प्रथम सुधारो स्वयं को, फिर औरन संग बात।
पूर्ण सफलता मिलेगी, धैर्य धरो मम भ्रात।।
भौतिक उन्नति काल में, रोजगार का ध्यान।
यौगिक, दर्शन, धर्म बिनु, शिक्षा मृतक समान।।
शिक्षा, मौखिक या लिखित, विस्मृत भी हो जाय।
सच्चरित आदर्श रख, चिर प्रेरित कर जाय।।

मन चंचल है सृष्टि में, काम, क्रोध, मद, लोभ।
संयत जब तक रह सके, वरना टूटे क्षोभ।।
संगति कर सत्मित्र की, होगा सुख संसार।
दुर्जन संग तो क्लेश, भय, घातमयी व्यवहार।।
मानस में सुख शान्ति ही, मानक जीवन के।
प्रेम, ताप, संतोषमय, पावन जीवन के।।
नहीं लखो परदोष को, अहम नहीं मम श्रेष्ठ।
परगुण, परहित ही लखो, जग सब माना ज्येष्ठ।।
बिनु सोचे करना अहित, मन्थन मन, मित लेय।
सुनियोजित ले कार्यमय, सफल रागिनी गेय।।
सत्य जगत में केवल दो है, एक प्रभू एक मृत्यु।
कर्म रचाये भाग्य बनाये, पुनि जन्म दिलाये मृत्यु।।
संकट, उत्सव, शासने, शमशाने हो साथ।
बन्धु, मित्र सच्चा वही, तन, मन, धन से साथ।।
मधुर वचन जलयान है, सब बैठाकर पार।
सज्जन संगति कर लियो, भव सागर से पार।।
सुत आज्ञा, पत्नी विनित, स्वस्थ शरीर सहाय।
संपति सुख संतोषमय, विद्वसुखी हो जाय।।
मोक्ष समद, नद आत्मा, पुण्यकर्म जलयान।
परहित दया पतवार ले, भंवर पार कल्यान।।

सूर्य तपे, धरती टिके, वायु प्रवाहित होय।
सत्य शक्ति ही प्राण है, इससे विलग न कोय।।
विद्याध्ययन, जप, दान में नहीं रखे सन्तोष।
निज धन, भोजन अरु प्रिया, में ही कर ले सन्तोष।।
सन्तोषम् परम् सुखम्, मधुर वचन मधुनात।
नहीं करे अभिमान तो, सर्व प्रिय बन जात।।
मदिरा बुद्धि भ्रष्टकर, वेश्या कर अविवेक।
लोभ, मित्रता भुलाकर, करती पाप अनेक।।
क्रिया, ज्ञान अरु भाव मय, चित्त वृत्ति का कोष।
वित्त, दार, लोकैषणा, में भटका सद्घोष।।
बाल्यकाल विद्या ग्रहण, यौवन अर्थ व काम।
अन्तकाल मोक्षार्थ हित, पावे सुरपुर धाम।।
रखो सदा मुस्कान मुख, लोकपूर्ण व्यवहार।
जीतोगे मन सकल सब, सबका स्नेह अपार।।
दूजे को सम्मान दे, रहें स्वच्छ, सानन्द।
बन जाओगे लोकप्रिय, सबमें हो आनन्द।।
मुदुभाषा, मुस्कान मुख, नयन करें दिल साफ।
सहज लोक व्यवहार से, करो गलतियाँ माफ।।
दया, धर्म, सत्कार भी, नैन रहे हैं बोल।
कुटिल नयन कटि पढ़ रहे, दिल की बातें खोल।।

ज्योतिष, योग अरु सामुद्रिक में हो जाओ परिपक्व।
ध्यान, धारणा, यम, संयम ही लाते जीवन सत्व।।

वेद ज्ञान का स्रोत है, गणित ज्ञान की शाख।
ज्योतिष, वेद गणित ही, नीति सृजन की आँख।।
विविध विविध जो सूत्र हैं, समाधान सब लाय।
गणित और व्यवहार में, जीवन सफल बनाय।।

स्वर्णाभूषण अरु रत्न सहित,
माता ने यह आशीष दिया।
जीवन में श्रेष्ठ चरित्र प्रथम,
हो स्वस्थ यही वरदान दिया।।
हो वित्त, वृत्त अरु वृत्ति में,
सत्यधर्म का राग सदा।
पितु ने आशीष वचन बोले,
सफल रहे अनुराग सदा।।

भौवन नगर से विदेश प्रस्थान

नीति वचन, आशीष, धन लेकर चला विदेश।
मणिकुण्डल गौतम सहित, करता नगर प्रवेश।।
गौतम तब कहने लगा, धन को साधन मान।
धन से सब आनन्द ले, कुछ मैं करूं बखान।।
नगर ग्राम में हो रहा, है आनन्द विलास।
तुमको आनन्दित करूं, मत होना मित्र उदास।।
नर नारी आकर्षण से युत, नगर संस्कृति रूप विचार।
हो किशोर या नव किशोर वय, लेने को आनन्द अपार।।
झुरमुट की ओटों में लक्षित, युवा नयन बातें करते हैं।
शिक्षालय के समय वृक्षतर, नव सपने निर्मित करते हैं।।
सात जन्म मरने की कसमें, इतनी जल्दी हो जाती हैं।
टूटेंगी या बनी रहेंगी, एक कहानी कह जाती हैं।।
उद्यानों का रूप संवारा, पुष्प-कली संग फूल खिले हैं।
मंडराते भौरों को लखकर, पुष्प कली रस रंग मिले हैं।।
कहीं नयन की चंचलता अरु, कहिं स्पर्शण का झंकृत तार।
चुम्बन, आलिंगन कर करते, श्री गणेश रतिकाम प्रहार।।
जीवन की आनन्द विद्या का, इसी समय होता है जोर।
उठो! जगो! किस ओर चलोगे, आनन्द सिन्धु के दोनों छोर।।

यौवन का चितचोर चितेरा, दृढ़वय में फल क्या खा लेगा।
पुष्प प्रफुल्लित होकर बगिया, महकाकर स्मृति पा लेगा।।
नगर, गाँव, झुरमुट की छैंया, या फिर कोई स्थल प्यार।
जिसने प्यार किया न जग में, उसका जीवन है बेकार।।
कहते जीवन के दिग्दर्शक, उठो मित्र मणि! कर लो प्यार।
बासन्ती मधुमाती ऋतु में, मदन-बाण का सहो प्रहार।।
सुरा सुन्दरी का यौवन से कंचन रत्न जड़ित सा साथ।
अर्ध चन्द्रिका, रूप यौवना बदली निशा बढ़ावे हाथ।।
पल-पल क्षण-क्षण बढ़ती जाती, और मिलन की चाह।
एक बार मित् साथ चलो तुम, स्वयं करोगे वाह।।
चौसर के कुछ सिद्ध दाँव से, जीतोगे सर्वत्र।
यश, धन, वैभव कदम तुम्हारे, यत्र तत्र सर्वत्र।।
सुर से सुरा नाम है जिसका, उसको पीकर रहो प्रसन्न।
जीवन के आनन्द यही हैं, वैसा मन जैसा हो अन्न।।
मणि ने नीति विचार कर, ठुकराया प्रस्ताव।
सुरा, सुन्दरी अरु मादकता या चौसर का दाँव।।
मानव को विकृत कर देते अरु चरित्र को नष्ट।
गौतम तुम भी दूर रहो, मत करना खुद को भ्रष्ट।।
इस पर गौतम ने कहा, सुनो हमारे मित्र।
पुष्प कली का एक मैं, प्रस्तुत करता चित्र।।

कलियों का अद्भुत संसार,
पल्लवन प्रथम पुष्प प्रतिहार।
प्रतीक्षा, आकर्षण, स्पर्श,
सुमादक, शोभित, व्योम अपार।।
सुकोमल, स्निग्ध, चंचला, मौन,
नयन लज्जा से होवे पूर्ण।
परागण की बेला से पूर्व,
प्रवाहण बासन्ती परिपूर्ण।।
बढ़े रति भावी मलय बयार,
ठिठुरने में मिलने की चाह।
चपल चमकें, गिरें किस पर,
विमोहित कर दिखलाये राह।।
बदल दे जो जीवन शैली,
कली से पुष्प बने कैसे।
अधर अमृत भीनी सी गन्ध,
पलक खुल जाते हैं ऐसे।।
कली में सिन्धु अनन्त अपार,
अग्नि की ज्वाला तीव्र प्रकार।
पवन मानस की भी गति तीव्र,
हिलोरें विहंस कली पर भार।।
धरा सी धारण की है शक्ति,
कली का है अनन्त विस्तार।
संभालों कली बने जब पुष्प,
क्रूर भ्रमरों से साक्षात्कार।।

गौतम विकृत मन रहा, कली का करता गान।
मणिकुण्डल समझे नहीं, क्यों करता दुष्गान।।
तब फिर गौतम ने कहा, चलो एक नव धाम।
धाम कौन है यह बता, मणि ने पूछा नाम।।

गायन वादन नृत्य नाटिका,
सगीतमयी परिपूर्ण विलास।
चलो मित्र! आनन्द उदधि के
धाम वहीं जहं मिटती प्यास।।

गौतम उवाच

लोक वासनाओं की देवी,
करती मलय समीर प्रहार।
जिसके आनन्दित अभिकृति से,
मुग्ध हुआ सारा संसार।।
जिसने जीवन को रस देने,
का सच्चा संकल्प लिया।
जिसने वंचित अरु बिछड़ों को,
एक नवीन विकल्प दिया।।
जिसने कर सर्वस्व समर्पण,
आमोदन का रचा विधान।
धन्य-धन्य हैं गणिका देवी,
चलो, करो दर्शन अरु ध्यान।।१।।

अपने कंचुक-पट को जिसने,
मानवता पर वार दिया।
जिसने कुच-मर्दन, क्रन्दन हित,
स्वयं समर्पण हार दिया।।
हर आगन्तुक का स्वागत है,
ऐसा भाव स्वभाव लिये।
बड़ों-बड़ों को पिला पयोधर,
मातृरूप भी धार लिये।।
हो प्रकाश या अन्धकार घन,
रख लेती औरों का मान।
धन्य-धन्य हैं गणिका देवी,
चलो, करो दर्शन अरु ध्यान।।२।।
दिग् अम्बर में हो नितम्ब या,
कुच-क्रीड़ा संकोच न हो।
सहवासी को हर सुख देने,
में कोई प्रतिरोध न हो।।
चिर अभिलाषा पूर्ण करे जो,
करे एकरस जीवन धार।
रति मे काम, काम मे रति का,
एक आत्म का रूप प्रकार।।
खुद को जला प्रकाश दिया है,
यह है ऐसी दीप प्रमान।
धन्य-धन्य हैं गणिका देवी,
चलो, करो दर्शन अरु ध्यान।।३।।

जिसकी नयन कटारी से ही,
वीर महा घायल हो बैठे।
उन्नत वक्षस्थल को लखकर,
धीर महा संयम खो बैठे।।
जिनकी वाणी की मधुरा ने,
दुखी महा को भुला दिया।
आलिंगन के प्रेम-पाश ने,
पुरुष भाव को जगा दिया।।
वरमाला के बिन उदार बन,
विविध पती का रक्खे ध्यान।
धन्य-धन्य हैं गणिका देवी,
चलो, करो दर्शन अरु ध्यान।।४।।
केलि कला की कुशल प्रवीणा,
बनी प्रेयसी है दिन रात।
षोडश श्रंगारों से सज्जित,
मनमोहक ज्यों शुभ्र प्रभात।।
आते सेज शय्या पर जिसके,
श्रंग बिखरने लग जाते।
अंग सुभग, उर ओज, नितम्ब सब,
प्रकृति रूप में दिख जाते।।
हो जाता एकात्म मिलन जब,
हो जाता जग का कल्यान।
धन्य-धन्य हैं गणिका देवी,
चलो, करो दर्शन अरु ध्यान।।५।।

बिखरे बाल, नजर बलखाई,
सन्तुष्टी का भाव लिये।
वस्त्र संवारे, पुनः पुकारे,
ऐसा कुछ उत्साह लिये।।
जिसने जीवन में विष पीकर,
भी अमृत का दान दिया।
अरु शरीर को अग्नि समर्पित,
कर शीतलता मान दिया।।
मनवांछित फल देने खातिर,
रखती सदा तैयार कमान।
धन्य-धन्य हैं गणिका देवी,
चलो, करो दर्शन अरु ध्यान ।। ६ ।।
सुख की दाता, परम प्रदाता,
नहीं रखे मन में दुर्भाव।
पाप पुण्य कुछ नहीं जगत में,
जग में है आनन्द उछाव।।
जिसमें हो आनन्द मगन मन,
वहीं प्रभू का वास है।
जिन स्थल में प्रेमभाव है,
नगर-वधू का वास है।।
सासें कब तक चलें या टूटें,
नहीं किसी को भी है ज्ञान।
धन्य-धन्य हैं गणिका देवी,
चलो करो दर्शन अरु ध्यान।। ७ ।।

यदि तुम मेरा कथन मानकर,
एक बार हो आओगे।
मूर्तिमान श्रृंगार मुग्ध हो,
जीवन सफल बनाओगे।।
मत भटको अब ठौर पंथ में,
सबसे बड़ा धर्म आनन्द।
पाप पुण्य सब यहीं बने हैं,
शिव-क्रीड़ा का लो आनन्द।।
काम रती ही देवि देवता,
इनका अब कर लो सम्मान।
धन्य-धन्य हैं गणिका देवी,
चलो, करो दर्शन अरु ध्यान।। ८।।

गौतम की दुष्वृत्ति लख, मणि को कष्ट अपार।
मित्र नहीं कुःसंग का, यह स्वयं बना अवतार।।
मणि बोला गौतम से "तू पापकर्म बतलाता है।
देवत्व छोड़कर के अब, तू दानवता अपनाता है।।
विषय वासना को तजो, यदि हित चाहो मित्र।
सुखद अन्त नहि होयेगा, धूमिल होगा चित्र।।"
"पाप पुण्य और देव दनुज का, है बेकार प्रकार, विचार।
हो जिसमें आनन्द-उदधि, बस वही श्रेष्ठ से श्रेष्ठ प्रकार।।"
"पुण्य, सत्य अरु धर्ममय, जीवन से कल्यान।

मित्र रहो सत्मार्ग पर, सात्विकता को जान।।"
इस पर गौतम ने कहा, "मित्र लगा लो शर्त।
सारा धन उसका हुआ, जो जीतेगा शर्त।।"
मणिकुण्डल रख धर्म पर पूर्ण अटल विश्वास।
निर्मल मन मणि आ गये, मानी गौतम फांस।।
नीतिज्ञ या ज्ञाता नहीं, सामान्य जन को था बुला।
प्रश्न की भाषा बदल, गौतम प्रफुल्लित हो चला।।
नगर जनों के सामने, प्रश्न रखा इस भाँति।
सत्य, धर्म पालक सदा, कष्ट सहें केहि भाँति।।
जीवन में आनन्द का, कैसा रहे महत्व।
कैसे किस विधि धन मिले, यह है सच्चा सत्व।।
अज्ञ पुरूष का कथन था, दन्द फन्द सिरमौर।
सत्य धर्म की सोच में पड़े न मिलता ठौर।।
इस पर गौतम ने कहा, "जीत गया मैं मित्र।
तेरा धन मेरा हुआ, अब तुम केवल चित्र।।"
"कोई मुझको ठग सके, ठग ले नाही बैर।
मैं न ठगता किसी को, प्रभु देखे नहिं खैर।।"
मणिकुण्डल ने हारकर, धन सौंपा तत्काल।
गौतम लेकर चल दिया, गठरी का सब माल।।

चलते-चलते नगर से दूर हुये श्रीमान।
गौतम ने छेड़ी पुनः, फिर विवाद की तान।।
'सत्य, धर्म निकृष्ट है, पाप पुण्य कुछ नाय।
तू तो भिखमंगा हुआ, मैं धनवान सुभाय।।"
"धन तो तूने ले लिया, किन्तु धर्म है श्रेष्ठ।
अन्तिम विजयी धर्म है, तू नहिं होगा ज्येष्ठ।।"
ढूंढ रहा था छोड़ना, मिला उपाय विचार।
क्रोध क्रोधतम रूप धर, किया वार पर वार।।

हमला करता था गौतम जब,
तब मणि ने पुनः विचार दिये।
यह समय बता देगा आकर,
त्वम् मित्रघात परिणाम लिये।।

तुम दुर्जन बनते रहो, मैं सज्जनता राह।
परमारथ के मार्ग में ईश मिलेंगे वाह।।

गौतम से मणिकुण्डल कथन

रे मित्र! छला है क्यों तूने,
धन की लिप्सा क्यों हुई प्रबल।
कर अंग भंग मुझ को तूने,
पाया है क्या शान्ती-संबल।।
संसार सार ही है मिथ्या,
क्या है तेरा, क्या मेरा है।
मन भ्रमित भाव पर पापों की
गठरी सम किये सबेरा है।।
ब्रह्माण्ड सत्य है एकमेव,
कर्मों की गति है फलदायी।
मनगति सम गति हो सकती है,
हो अगर प्रगति का हमराही।।
मेरे मन में तू मित्र मेरा,
तेरा मन फिर क्यों क्षुद्र हुआ।
क्या सत्य कथन है मूर्ख निम्न,
से निज पत्तल में छिद्र हुआ।।
पितु की आशा, माँ की ममता,
विश्वास मित्र का मूलमन्त्र।
विश्वासघात इन तीनों से,
अपराध बना अक्षम्य तन्त्र।।
ऐसा अपराध किया तूने,
पर राम तेरा कल्याण करें।

मद, काम लोभ से वंचित कर,
सत्मार्ग हेतु निर्माण करें।।
गौतम ने कर विश्वासघात,
हाथों पैरों पर किया घात।
नेत्रों को क्षुरिका से खोदा,
पौधों से करता पृथक पात।।
सब धन लेकर प्रस्थान किया,
वो होकर के उच्छन्न।
नहीं प्रायश्चित भाव था,
था मन में अधिक प्रसन्न।।
मणिकुण्डल क्षत विक्षत हुये,
निकट विष्णु का वास।
चक्षुस्तीरथ था जहाँ,
गोदावरि तट विश्वास।।
मणिकुण्डल क्रन्दन करें,
रुदन और प्रभु नाम।
जीवन आशा टूटती,
बचा राम इक नाम।।
''हे राम! नराधम हूँ मैं क्या,
मैंने आखिर क्या पाप किया?
हे राम! भजा तुमको ही सदा,
तुम पे ही सदा विश्वास किया।।
तुम छोड़ गये हमको जब थे,
बिनु राम न लौटूं अयोध्या में।

संकल्प यही क्या पाप हुआ,
क्यों दुख दिया फिर जीवन में।।"

राम का ध्यान कर, एक विश्वास कर।
नैराश्य में आशादीपक जलाने प्रखर।।
मणिकुण्डल कहे यह, नैराश्य की शाम है।
मेरी हर श्वास पर राम का नाम है।।
श्वास ही आस है, श्वास में वास है।
ईश की है कृपा, श्वास जो पास है।
कौन कहता प्रत्यक्ष ईश्वर नहीं
श्वास अर्थात् ईश्वर बिना कुछ नहीं।।
श्वास को लख प्रभू है हृदय में मेरे।
हृद का स्पन्द बन वह बसा है तेरे।।
श्वास में ईश है, श्वास ही ईश है।
ईश विश्वास अरु श्वास का रूप है।
ऐसे विश्वास कर मन को धीरज दिये।
रक्त भी बह रहा, शक्ति क्षीणित किये।।
भाव नैराश्य का हो रहा था प्रबल।
मृत्यु में ईश का रूप दिखला प्रबल।।

मणिकुण्डल पूर्ण निराश हुआ,
मन में न रहा विश्वास।
है नहीं सहायक वन कोई,
टूट रही मम श्वास।।
कल्पना मरण की कर बैठा,
हे नमन प्रभु श्री राम।
फिर मरण नमन एहि भाँति कह,
अन्तिम करे प्रणाम।।

मृत्यु

अहे शाश्वत मरणासन!
सर्वोच्च सत्ता के अग्रदूत,
अस्तित्व प्रमाणक
शान्ति तुम्हारा पुत्र,
मर्त्य हो प्रमुख नियामक
विश्व के क्रन्दन को कर बंध
तोड़ जग के अति दुष्कर बंध
लिवा ले गये चेतना- शाम,
नष्ट कर सारा मनु-अभिमान
दिया बस करुणा का उपहार,
दु:ख के जलधि-प्रहार
शान्त, निश्चल सा धवल स्वरूप
अलख किरणों का निर्गत व्यूह

और,
रहा बस केवल पार्थिव शेष
यही कह सकता संसृति-सार
बन गए हो तुम अब निर्वेश
किन्तु तुम्हारे यह अजेय चिन्ह
प्रदर्शित करते हैं गति-मिन्ह
अहे निर्वाण! मोक्ष के बाण
तुम्हारा यह शाश्वत सन्धान
बना है अब भी वही रहस्य
फिर मर्त्यलोक का हुआ ही क्यों निर्माण
जनन के जनक और तत्पुत्र
मनन से परे महास्मृति-समुद्र
तुम्हारे भय से कंपित आज
नमन करते हैं अपना माथ

एहि भांति मृत्यु आवाह्न कर, कष्टों से मुक्ती मांग रहे।
घनघोर रात्रि में क्रन्दन कर, कर रुदन अनवरत जाग रहे।।

आकाशवाणी द्वारा पिछले जन्म का वृतान्त सुनते श्री मणिकुण्डल जी

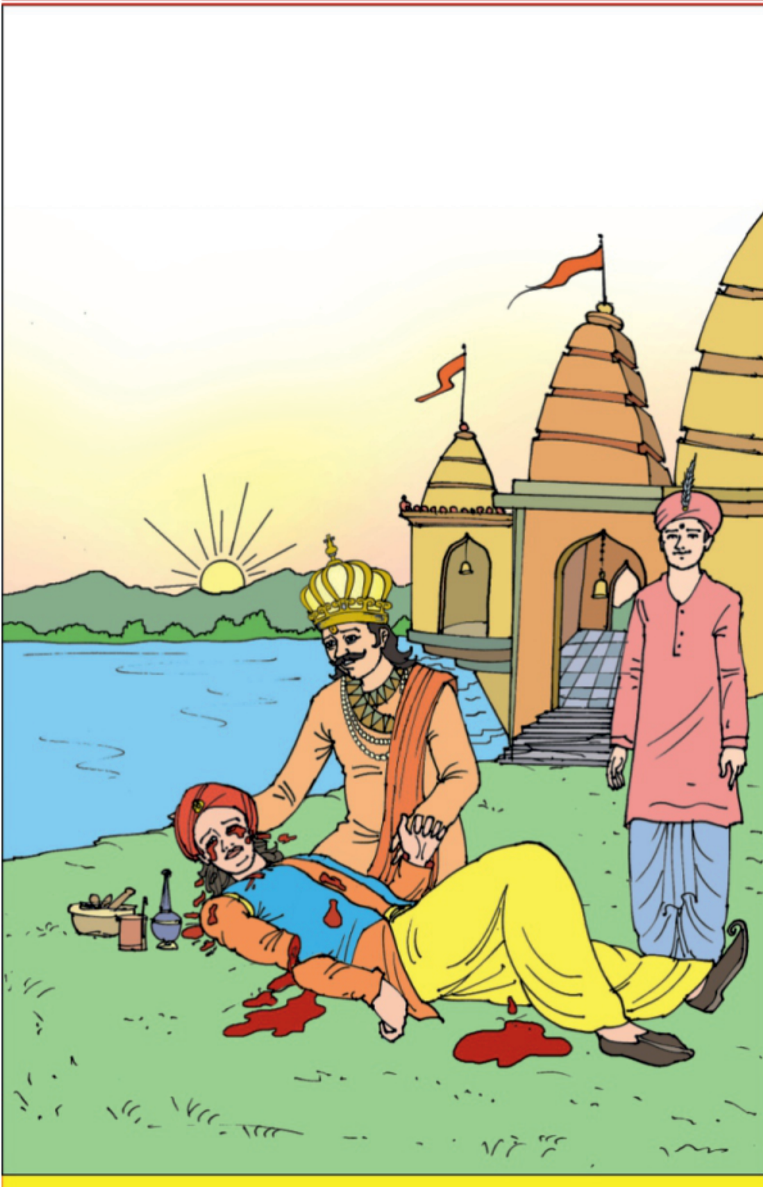

लंकापति विभीषण जी द्वारा श्री मणिकुण्डल जी की चिकित्सा करना

पंचम सर्ग

प्रेमानन्द पर्व

एतत जन्मस्य अथवा विगत जन्मस्य
कर्म, प्रारब्धश्च प्रवीण तेषाम्।
भोगं अवश्य प्राप्नोति सर्वदा
अतः अपरानाम् सुखं दद्याम् वयम्।।

घायल होने पर मणिकुण्डल मन का चित्रण

मम कष्ट हरो, हे राम मेरे,
आशीष प्रदान करो अपना।
जीवन होगा तब धन्य सफल,
जब दर्शन दे दोगे अपना।।
तुमसे बिछुड़े युग बीत गया,
जीवन ही मेरा रीत गया।
मन में है कष्ट अपार हुआ,
क्यों साथ प्रभू का छूट गया।।
प्रभु छूटे, मात पिता छूटे,
मित्रत्व धर्म का हुआ लोप।
कैसा है यह संसार सकल,
माया प्रभु की या हुआ कोप।।
मानस तापों से पीड़ा भी,
पर्याप्त नहीं क्या भक्तों को।
तन की, धन की पीड़ाओं के,
बाणों से बहते रक्तों को।।
मन की ताकत क्यों टूट रही,
इसमें विश्वास जगा देना।
कर्मों का फल निश्चित मिलता,
विश्वास हृदय में ला देना।।
क्यों हुई भलाई तार-तार,
ले रहे परीक्षा हो कैसी।

माँ सरस्वती उद्गम स्थल,
कल-कल ध्वनि से ही जाना है।।
मणिभद्रपुरम् के सिद्धस्थल,
में ऋषी मुनी का डेरा था।
अष्टवसू, मातामूर्ती का,
तपस्थल और बसेरा था।।
अष्टवसू ने ही स्नान हेतु,
वसुधारा का निर्माण किया।
है परमपुण्य साधना गुफा,
बहुतों ने जिनमें ध्यान किया।।
तप घोर किया विष्णू जी का,
ऋषि दम्पति ने दस वर्षों तक।
फिर यज्ञ अखण्ड किये दिन रात,
त्रिलोकधृक का दो वर्ष तलक।।
होकर प्रसन्न प्रकटे मेधज,
ऋषि दंपति ने मांगा वर यह।
प्रभु पुत्र रूप में आ जन्मों,
हो सफल हमारा जीवन यह।।
तथास्तु कह अन्तर्ध्यान हुये,
बद्रीनाथ रूप में जनम लिया।
बचपन क्रीड़ा करते-करते,
नारायण शिला पर वास किया।।
पितुमात आशीष करें बद्री,
नारायण में जो श्राद्ध करें।

पितरों को मोक्ष मिले तत्क्षण,
बैकुण्ठ धाम में स्वयं तरें।।
है गया मे तो विष्णू पद ही,
यहाँ पूर्ण विराजे हो तुम ही।
मणिभद्रपुरम् आते रहना,
माता ने यह आशीष कही।।
मणिभद्रपुरम् अब माणा है,
माना ग्राम कलिकाल कहायेंगे।
संकल्प प्रभू का है हर वर्ष,
माता से मिलने जायेंगे।।
इक था प्रशान्त नामी ब्राह्मण,
नर शिला में था जिसका निवास।
विष्णु स्वरूपा बद्रीनाथ जी,
के चरणों में था किये वास।।
कर ध्यान योग पूजन दर्शन,
नारायण का था बना दास।
आध्यात्म शिखर पर पहुंच सदा,
श्री चरण रखे हृद में निवास।।
माँ सरस्वती अरु अलकनन्द,
नदियों से तन मन शुद्ध किये।
स्वामी की सेवा अरु तप से,
माँ बेटे में संवाद किये।।
दैनिक संदेशों का प्रदान,
आदान करा करता प्रशान्त।।

आशीष मात पितु का लेने,
प्रतिवर्ष प्रभू लेते एकान्त।।
सब ऋषि मुनियों को ज्ञात रहा,
हरि निश्चित यहाँ पधारेंगे।
करके दर्शन उनके हम सब,
जीवन को धन्य सँवारेंगे।।
इक बार सुभद्रज ऋषि ने पूछा,
बद्री जी कब तक आवेंगे।
गणना करने में भूल हुई,
कुछ दीर्घ बताया आवेंगे।।
सुभद्रज तपलीन कन्दरा में,
ध्यानस्थ हो गये अवधिकाल।
एक पक्ष पूर्व बद्री आये,
माता का लेने हाल-चाल।।
जब लौट रहे थे शोर हुआ,
ध्यान भंग हुआ, ऋषिवर का था।
कर दर्शन बोले, ''हे प्रशान्त,
क्यों गलत बताया, तुमने था।।
सन्देश, मार्ग, उत्तर भ्रमित,
विश्वासघात अपराध।
निश्चय दुष्फल पाओगे,
जनम-जनम को साध।।
त्रेतायुग में विष्णु जब,
लेगें राम अवतार।

चौदह बरस वियोग में,
वन भटकोगे भर्तार।।
मणिभद्रपुरम् के वासी तुम,
जब अवध नगर जन्माओगे।
मणिकौशल सुत मणिकुण्डल,
बन जगती में जाने जाओगे।
हे विप्र! बनोगे अवध वैश्य,
इक विप्र तुम्हें फिर छल लेगा।
इक महा यशस्वी विप्र तुम्हें,
नवजीवन दे अनुभव देगा।।
भ्रमित किया ध्यानस्थ कर,
नेत्र रहे थे बन्द।
नेत्र ज्योति से भ्रमित हो,
तुम भोगोगे वृन्द।।''
क्षमा-क्षमा करता गिरा,
ऋषि के चरण प्रशान्त।
गलती अनजाने हुई,
करो अन्ध का अन्त।।
मुनिवर ने हो द्रवित तब,
दिया उसे आशीष।
नेत्र प्रकाशित करें पुनि,
अग्र दिवस ही ईश।।
मणिभद्रपुरम से नारायण,
के पास गया तपचर प्रशान्त।

तप किया शुभांगम का उसने,
हमको दर्शन देना सुशान्त।।
दरबार बद्रीनारायण से,
इक पुष्प शीश पर गिरा तभी।
हो गयी सफल अर्जी मेरी,
हो गया प्रशान्त प्रसन्न तभी।।
त्रेतायुग में बन राम भक्त,
तुम वही प्रशान्त तपस्वी हो।
माणा सम अवध है पुण्यधाम,
हे मणिकुण्डल तेजस्वी हो।।
चौदह वर्षों का काल खण्ड,
है सिद्ध तुम्हारी तपचर्या।
निश्चय प्रभात कल रामभक्त,
कोई करुण करेगा उपचर्या।।
थे हाथ पैर से क्षतविक्षत,
नेत्रों से घायल मणिकुण्डल।
प्रभु राम पुकारे पल प्रतिपल,
क्रन्दन से गूंजा यह मण्डल।।
हे राम! राम की रट लेकर,
घायल की तड़पन गुंजित थी।
यह रात्रि हो गयी ब्रहमरात्रि,
हर पल वर्षों की दुर्गति थी।।
थी महादशा शनि की उतरी,
थी वक्रदृष्टि भी सरल हुई।

कुछ अन्तर, प्रत्यन्तर बदले,
प्रारब्ध जगे, प्रभु कृपा भई।।
सबके जीवन में जैसा होता
ग्रह, नक्षत्रों का खेल हुआ।
उस रात्रि महापरिवर्तन से
था अशुभ, वहीं शुभ मेल हुआ।।
था अरुण वहाँ जब आने को,
कुछ आस बंधी, विश्वास हुआ।
आगमन विभीषण का प्रखरित,
निःश्वास समय में वास हुआ।।
शुक्ल कृष्ण एकादशी,
नित आते लंक नरेश।
योगेश्वर अभिषेक हित,
चक्षुस्तीर्थ प्रवेश।।
अगहन सुदि एकादशी,
उदयकाल शुभलग्न।
वैभीषणि संग पिता के,
आये होकर मग्न।।
राम-राम मय आह सुन,
ध्यान दिया चहुँ ओर।
मणिकुण्डल घायल पड़े,
पास न कोई और।।
मानवता कर्तव्य है,
प्राणदान का धर्म।

जब भी अवसर मिल सके,
करो सदा सत्कर्म।।
पितु से आज्ञा पा गये,
मणिकुण्डल के पास।
कैसे क्या घटना हुई,
जान करें विश्वास।।
''अवध नगर का वैश्य मैं,
प्रभू राम का दास।
मम घाती इक मित्र ने,
किया संग परित्रास।।
धर्म, सत्य पर मैं अड़ा,
छल था उसका अस्त्र।
धन तो लेकर ही गया,
चला मुझी पर शस्त्र।।''
मणिकुण्डल का कथन सुन, वैभीषणि करुणा कुंज।
पिता विभीषण से कहा, यह रामभक्ति का पुंज।
लंकराज कहने लगे, ''मणिकुण्डल तुम धन्य।
स्वस्थ करेंगे आपको प्रभूकृपा अनुमन्य।।
चक्षुस्तीरथ धाम यह, क्षीरसमद सम वास।
पावन आत्मा ही टिके, धन्य प्रभू के दास।।
भव्य दिव्य मन्दिर बसे, योगेश्वर श्री विष्णु।
सरयू सम गोदावरी, राम सदृश हैं विष्णु।।
उनकी कृपा अपार है, विधि विधान का खेल।

सुख-दुख हर्ष विवाद अरु मेरा तेरा मेल।
सफल मनोरथ पूर्ण हो, जाते यन श्री मान्
राम मिलन की कामना, होगी शीघ्र प्रमान।।"
विशल्यकरणि औषधि लखी, दिव्य मन्त्र का जाप।
मणिकुण्डल चिन्तन करें, मुक्त हो गया श्राप।।

विभीषण मणिकुण्डल संवाद

विविध यत्न प्रयत्न कर,
जुटे विभीषण आज।
संजीवनि सम बूटिका,
दिव्य प्रभाव सुकाज।।
घाव सभी गायब हुये,
आया नयन प्रकाश।
अचरज प्रभु स्पर्श सम,
अनुभव संग आभास।।
गद्गद अरु साभार मे,
मणि ने जोड़े हाथ।
कहें विप्रवर कौन हैं,
की कृपा हमारे साथ।।
विभीषण मुस्का कहिन,
मैं भी राम का दास।
लंकदेश राजा बना,
पा राम कृपा आकाश।।

विभीषण उवाच

नदी के किनारे, चलते हुये ही,
तड़पते हुये तुम यहाँ क्यों पड़े थे।
पता भी नहीं है, मगर इस तरह तुम,
प्रभू राम को, खोजने चल पड़े थे।।
तुम्हें किसने मारा, घायल किया है,
लूटकर माल तेरा, कहाँ ले गया है।
कहो मित्र कैसे, तुम्हें दे के धोखा,
तेरा माल सारा, गबन कर गया है।।
होना नहीं पर, जरा भी परेशाँ,
तुम्हारा समय शुभ, निकट आ गया है।
तुम्हें राम जी का, पता अब मिलेगा,
ऐसा समय शुभ, यहीं आ गया है।।
हिरन भेज सुन्दर, जानकी के पास,
रावण ने सीता, हरण जब किया था।
प्रभू राम ने वध, रावण का करके,
लंका का शासन, मुझे दे दिया था।।
वनवास करके, भरत भाव पाकर,
अयोध्या के राजा, प्रभू बन गये हैं।

कृपा है सभी पर, दुखी न कोई है,
निर्बल के बल, राम जी बन गये हैं।।
अयोध्या से चलकर, भटकते हुये भी,
प्रभू राम खातिर, सभी कुछ सहे हो।
कृपा राम सीता, की तुम पर सदा है,
तभी दुख भुलाकर, मगन हो रहे हो।।
कृपा राम जी की, है बनो शीघ्र राजा,
पत्नी सहित तुम, अवध को चलोगे।
प्रभू दिव्य दर्शन, तभी मिल सकेगा,
सदा राम भक्तों के, मन में बसोगे।।
यही भक्त भगवन, का रिश्ता अनोखा,
प्रभू से मिलन, चाहना में बहे हो।
बहुत जल्द होगा, मिलन राम जी से,
प्रभू की शरण में, सदा तुम रहे हो।।
पुराण तुम्हारी, गाथा लिखोंगे,
इतिहास में तुम, अमर हो सकोगे।
तुम्हारे जो वंशज, जगत में रहेंगे,
तेरा ध्यान धरते, कृपा कर सकोगे।।
राम भक्त हो तुम और हनुमान, मैं भी।

सारे संकट तुम्हारे कटेंगे हैं जो भी ।।
संवाद या कहूँ इस तरह
राम जी की कृपा घायल यन कीन्हा।
राम मिलन, राजपद आदि वैभव,
विभीषण ने उनको आशीष दीन्हा।।
इस तरह कह उठे विभीषण जी सजल,
सोचकर स्वस्थ कर दिया है, मन्त्र से जाप से।
जानकर कैसे घटना हुई मित्र से
और विश्वास मर्दन हुआ आपसे।।
राम और हनुमान की कृपा जुड़ी है साथ।
मानो अब भी साथ हैं, कृपा सिन्धु रघुनाथ।।
हनूमान संजीवनी जब लाये थे लंक।
गौतमी-गंगा तट यहाँ, औषधि गिरी निशंक।।
औषधि अरु वह मन्त्र भी देता हूँ कर योग।
करना परहित भाव में, इनका सदा प्रयोग।।
सुनकर युद्ध वृत्तान्त सब, मणि हो गया अधीर।
जल्द बताओ प्रभु कहाँ, दर्शन करूं प्रवीर।।
लंकराज ने तब कहा, दशकन्धर का अन्त।
करके राम अयोध्या-राज भये श्रीमन्त।।

समाचार सुन सुखद यह,
कष्ट गये सब भूल।
जल्द अवध निज गेह जा
सिर माथे हो धूल।।
सियाराम दर्शन ललक,
हित चलना है तात।
नमन विभीषण को किया,
धन्यवाद शुभ प्रात।।
चक्षुस्तीरथ गोदावरी तट,
कर नमन मणिकुण्डल चले।
प्रस्थान महपुर दिश रहा,
अब राम तो होंगे भले।।
महपुर नगर विख्यात था,
सौराष्ट्र व महाराष्ट्र था।
शुभ समय आया लग रहा,
उनका यही विश्वास था।।

नगर वर्णन

चलते-चलते मिल गया, महापुर साम्राज्य।
महाबली अधिपति तहाँ, पापकर्म थे त्याज्य।।

नगर प्रवेश किया अद्भुत सा,
नव कलरव, नव रूप रंग था।
नवल नवेली नवकृतियों में,
भाव व्यक्त का अजब ढंग था।।

शान्त सुखद निर्मल नदियों का,
सतत प्रवाह हिलोरें लेता।
मन के अन्तस में हो जाग्रत,
भक्ति प्रेम की नींव सहेता।।
प्रेमपूर्ण प्रणाम प्रदर्शन,
भाव भरी सत्कार सुशैली।
हृदयंगम हर हृदय कर रहा,
नहीं किसी की आत्मा मैली।।
जीवन का प्रतिपल पुण्यों में,
रूप माधुरी पुष्प सुवासित।
कर्म उच्च व्यक्तित्व संवारे,
सत्कृतित्व अरु वाक् सुवासित।।
प्रारब्ध कर्म के समीकरण,
निर्माण भाग्य का करते हैं।
मन वचन कर्म से किये कृत्य,
जीवन दिशि रचना करते हैं।

महापुर पहुँचना चिकित्सा करना

महाबली के राजमहल में,
एकमात्र सन्तान कुमारी।
संकट में जीवन था उसका
राजमहल का संकट भारी।।
राजसुता बीमार थी, जन्म अन्ध लाचार।
वैद्य, तान्त्रिक व्यर्थ थे, सब प्रयास बेकार।।

श्री मणिकुण्डल जी द्वारा राजकुमारी का उपचार करना।

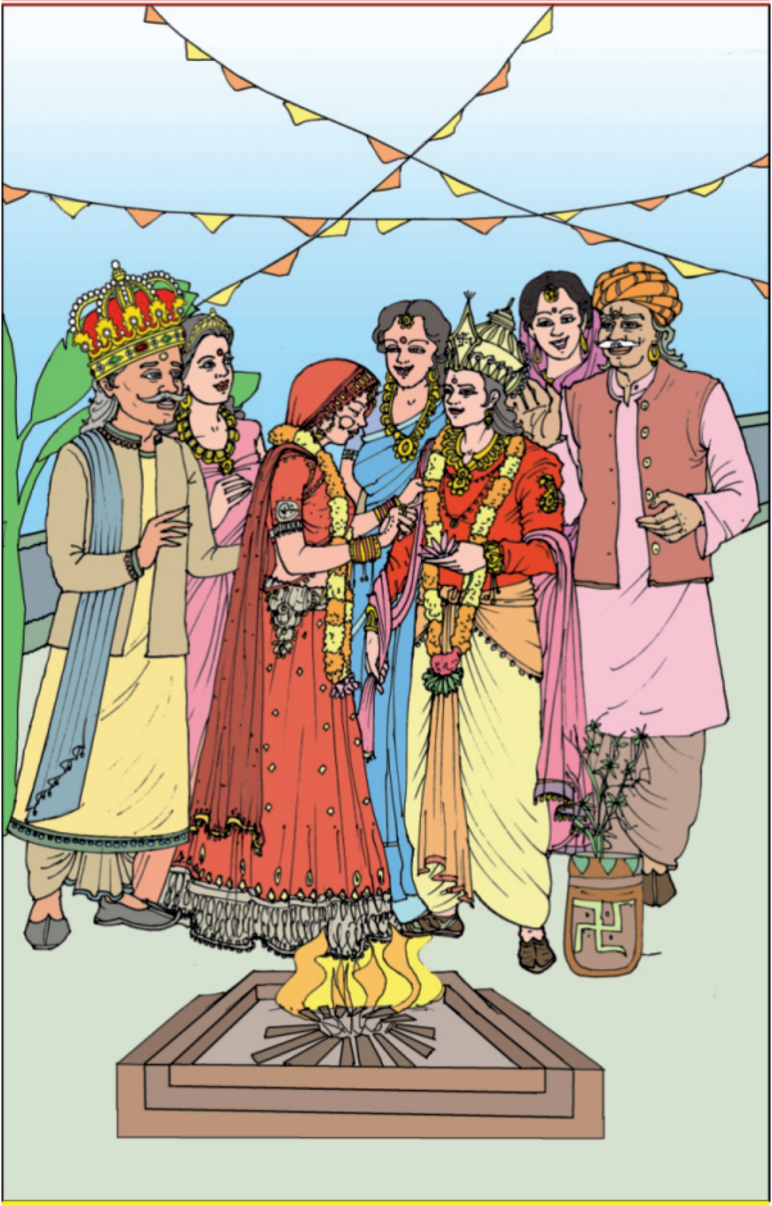

श्री मणिकुण्डल महारूपा विवाह

मणि ने जानी सूचना, है संकट में राज।
विश्व बन्धु कल्याण अरु करने परहित काज।।

मरणासन्न स्थिति भई भारी।
जन्म अन्ध जो राजकुमारी।।
वैद्य, तान्त्रिक मान्त्रिक आये।
भेषज, मन्त्र आदि अजमाये।।
बहुविधि करैं प्रयास प्रयासा।
बची नहीं केवल कुछ आशा।।
मणिकुण्डल जीने जब जाना।
स्वस्थ करेंगे मन में ठाना।।
गये राज प्रासाद सोचकर।
द्वार पाल ने रोक द्वार पर।।
पूछा केहि विधि आये श्रीमन।
"संकट राज सुता का जीवन।।
प्रभु किरपा कुछ करहुँ प्रयासा।
सफल रहूँगा है विश्वासा।।"
सुन मणिकुण्डल वचन प्रकाशा।
लगा कुआँ आया ढिंग प्यासा।।
राज सुता को देख गम्भीरा।
नाड़ी, नेत्र लखें क्या पीरा।।
विशल्य करणि संजीवनि लाये।
दिव्य मन्त्र के संग पिलवाये।।
नेत्रों में भी लेप लगाकर।
आशा जीवन दीप जगाकर।।

नव जीवन का पुण्य प्रतापा।
महरूपा प्रसन्न बहुआपा।।
तन स्वस्थ व मन आश्वस्त हुआ।
यह एक अलौकिक कृत्य हुआ।।
नेत्र खुले तो खुले ही रहे।
मन हर्ष अगाध सहे न सहे।।
नव एक दिखा जग जगमग सा।
कल्पना नहीं की थी अब सा।।
क्षण में सब हुआ चमत्कृत सा।
वीणा बजे औ मन झंकृत सा।।
खुशियों का पारावार नहीं।
वर्णन करना सम्भव ही नहीं।।
रंग क्या होते नहीं भान था।
चित्ररूप का नहीं ज्ञान था।।
विविध कलाओं के दर्शन का।
फुल्ल प्रफुल्लित से अर्चन का।।
लखा भेद है तम, प्रकाश में।
धूप, चांदनी के प्रकाश में।।
अद्भुत यह सब जगत हो गया।
जीने का भी लक्ष्य हो गया।।
महरूपा ने निज शरीर को।
देखा मणिकुण्डल प्रवीर को।।
हाथ जोड़कर करैं प्रणामा।
आये हो तुम बनकर रामा।।

आभा मण्डल स्वर्णिम उसका।
कद व मस्तक ऊँचा जिसका।
शरीर सौष्ठव, सुगठित माना।
लेखन, वाचन में प्रतिमाना।।
सुन्दर गौर शरीर विशाला।
चौड़े कन्धे मस्तक वाला।
नयन दयामय काले केश।
आकर्षक जिसका परिवेश।।
लगे देव अवतार कोई है।
वाणी की झंकार हुई है।
मम उपकृत करने की खातिर।
ईश कृपा को देने खातिर।।
जन्म लिया धरती पर जिसने।
दैवीगुण दैदीपित जिसमें।।
मम अन्धी की रुग्णावस्था।
दूर किया अभिशाप अवस्था।।
मम सारा सौन्दर्य निरर्थक,
था जब थे ही मम नेत्र नहीं।
नेत्र कृपा करने वाले कर से,
मिल धन्य हूँ, व्यक्त नहीं।।
मणिकुण्डल के नाम सदृश ही,
मणिमय कुण्डलमय है शीश।
तुम्हरे तप, सत्कर्मों कारण,
तुम पर कृपा करें जगदीश।।

महरूपा विनती करे, हाथ जोड़कर नाथ।
सुनें हमारी विनय को, नमन कर रही माथ।।

महारूपा द्वारा मणिकुण्डल जी से विनय

प्राण प्रिय हो मेरे, बन के भगवन मेरे।
भक्त के दिल के, उद्गार सुन लीजिये।।
जिन्दगी में मेरे जो उजाला किया,
चीरकर अन्ध की मोटी दीवार को।
रोशनी की किरण एक देकर मुझे,
है दिया आपने सुख के संसार को।।
जग के दीदार का सुख मुझे जो मिला,
ज्ञान, वरदान हित मम नमन लीजिये।
भावना भाव से, कल्पना कल्प तक,
खुद ही साकार करके स्वयं दीजिये।।
प्राण प्रिय हो मेरे, बन के भगवन मेरे।
भक्त के दिल के, उद्गार सुन लीजिये।।
आपकी है कृपा जिसकी उपमा नहीं,
कुछ कृपा और कर दें, तो अच्छा रहे।
हर किसी से नहीं कोई मांगा करे,
आप दाता सदा हों तो अच्छा रहे।।

मेरा जीवन समर्पित रहे आपको,
आप पतवार मेरी स्वयं लीजिये।
मौन मन है प्रफुल्लित हुआ जिस तरह,
आप उसको सुवासित सदा कीजिये।।
प्राण प्रिय हो मेरे, बन के भगवन मेरे।
भक्त के दिल के, उद्गार सुन लीजिये।।
तभी आ गये महाबलि, जिनका था यशगान।
महापुरी में अचल था, उनका राज्य विधान।।

महाबली बोले हे नरवर,
धन्यवाद दूं किस विधि श्रीवर।
मम बेटी को जीवन देकर,
जन्म अन्ध का दोष हटाकर।।
तुमने हम पर बड़ी कृपा की।
लाये तुम उजियारी झाँकी।।
अर्ध राज्य प्रिय वत्स संभालें।
बने आप इसके रखवाले।।
सविनय मणिकुण्डल कर जोरे।
परहित धर्म किये हम मोरे।।
राजकाज का लोभ नहीं है।
कछु विलम्ब भा क्षोभ यही है।।
अवध वैश्य मैं रामगमन संग।
गये प्रभू तो शिथिल सभी अंग।।

रामहु अवध लौटकर आये।
वैभाषणि यह कथन सुनाये।।
अपना राज संभालो राजन।
राम दरश को जाऊँ राजन।।
महरूपा बोली तब स्वामी।
नवजीवन के दाता नामी।।
मैंने स्वामी मान लिया है।
हिय में पतिवर ठान लिया है।।
राम दरश को हम भी जायें।
सुख, सौभाग्य सफल हम पायें।।

मणिकुण्डल विस्मित भैय अतिशय, स्वामी-स्वामी कहती रूपा।
उसी समय महराज महापुर,अति विनम्र बोले गुणरूपा।।

मम पुत्री के जीवनदाता।
नेत्रों में भी ज्योति प्रदाता।।
जीवन साथी उसके बनकर।
कृपा करो तुम राज्य ग्रहणकर।।
मैं भी निश्चित हो जाऊँगा।
पुत्र रूप तुमको पाऊँगा।।
सकल पदारथ होंगे पूरे।
अधूरे कार्य मम करना पूरे।।
सुनकर दोनों के वचन प्रिय।
द्रवित हुआ मणिकुण्डल का हिय।।
बोले वचन सकुचि सकुचाने।
मातु पिता बिनु कैसे माने।।

स्वीकृत है प्रस्ताव आपका।
आशिष होवे पिता मात का।।
सुन विचार उत्तम मणि जी के।
भये प्रसन्न महाबलि नीके।।
वस्त्र राजसी मणि को दीन्हा।
तुरत राज आज्ञा भी दीन्हा।।
मंत्री जी मणि के संग जाकर।
सादर मातु पिता को लाकर।।
रथ चलने को करें तैयार।
मणि, मन्त्री उस पर हो सवार।।
राजमन्त्री के साथ मणि,
चले भौवन की ओर।
अश्वगति, मन भी चले,
मम जननि जनक के ठौर।।
मातु पिता से मिलन प्रतीक्षा।
मन में उमड़े घुमड़े इच्छा।।
दिवा रात्रि चलकर के आये।
भौवन नगर निकट पहुंचाये।।
अरुण उषा की अदभुत लाली।
मानो रवि स्वागत की थाली।।
मन्द-मन्द ज्यों मलय बयारा।
शुभ-शुभ है जगती में प्यारा।।
शाकम्भरी नींद से जगकर।
कहती सुनो हमारे प्रियवर।।

मैने स्वप्न आज इक देखा।
मणिकुण्डल को राजा देखा।।
हम दोनों के चरण पखारे।
राजमात कह मुझे पुकारे।।
सुनकर मणिकौशल मुसकाना।
राम दरश मम राज समाना।।
शुभ-शुभ सगुन बतावे मोका।
सुत ने पाया राम-झरोका।।
निश्चय वह शुभ समाचार ला।
राम दरस का घोर ज्वार ला।।
हमसे मिलने आ जावेगा।
राम कृपा निश्चित पावेगा।।

मेरा प्यारा पुत्र मुझे भी याद आ रहा।
आवेगा वह शीघ्र यही विश्वास भा रहा।।
इसी समय पर द्वार पर, आया रथ पंच-अश्व।
भौवन राजा भ्रमण पर, उनका होगा अश्व।।

मणिकौशल यह चर्चा कर-कर।
निज अनुमान लगाते जी भर।।
इक राज पुरुष अन्दर आता।
लख हुये सशंकित पितु माता।।
आखिर क्या है अपराध किया।
मैंने तो कर भुगतान किया।।
जब राजपुरुष ने चरण छुये।
विस्मय भर वे आशीष दिये।।

फिर उसे उठाया हाथ पकड़।
जब लखा मणी, है लिया जकड़।।
पितु मात भये भावुक दोनों।
थी अश्रुधार आठों कोनों।।
पितुमात पुत्र का मिलन अकथ।
अनिर्वचनीय आह्लवाद सुकथ।।
सर हाथ फिरा माता बोली।
मैं सदा याद करके रो ली।।
तेरी चर्चा हम करते थे।
दिन में भी आहें भरते थे।।
निष्प्राण हुआ मेरा शरीर।
मन का उल्लास दिवंगत था।।
आया है तू नवजीवन ले।
ज्यों सृष्टि-सूर्य की शौर्य कथा।।
तू ही सर्वस्य हमारा है।
हमको प्राणों से प्यारा है।।
देख तेरा यह राजवेश हम।
हो गया नष्ट है सबका गम।।
किसी देश में तू सैनिक है।
या व्यापारी का प्रतिनिधि है।।
सर्वाधिक करदाता होने।
दान किये हैं मणि या सोने।।
क्या है कैसे-कैसे बीता।
जल्द बताओ मन है रीता।।

मणिकुण्डल वृत्तान्त सुनाया।
गौतम और विभीषण माया।।
चक्षुतीर्थ माहात्म्य सुनाकर।
मन में आशादीप जगाकर।।
गोदावरि तट की महिमा संग।
महापुरी का राजमहल रंग।।
दिव्यमंत्र अरु औषधि के संग।
राम भक्ति की शक्ति सहित दंग।।
महाबली अनुरोध सुनाया।
फिर मन्त्री जी को बुलवाया।।

मंत्री जी ने सर्वप्रथम, कौशल शाकम्भरी प्रणाम किया।
फिर हाथ जोड़कर विनय सहित, महपुर खातिर अनुरोध किया।।

राम अयोध्या वापसी, महरूपा संग नेह।
चले महापुर ओर सब, पुत्रवधू के गेह।।
पुत्रवधू के गेह अरु, राम मिलन की चाह में।
कर विवाह के बाद, अवध कूच के भाव में।।
हो गये थे निश्चिन्त तब किया मार्ग विश्राम।
महापुरी के बाद में, दर्शन प्रभुवर राम।।

पंच अश्व रथ गतिमय चलकर। पहुंचा जब चक्षुस्तीरथ पर।।
किया रात्रि विश्राम वहाँ पर। संस्मरण साकार दिखाकर।।
अग्रिम सैनिक महपुर भेजे। मणिकुण्डल आ रहे सहेजे।।
प्रात समय योगेश्वर दर्शन। सबने किया आरती अर्चन।।

विष्णु जी की आरती

नमन योगेश्वर विष्णू को, जगत के पालक पोषक को।
क्षीर सागर की अगम अथाह, राशि जल मध्य विराजत जो।
शेष शैय्या पर शोभित आप, लक्ष्मी संग प्रकाशित जो।।
उन्हीं की चरण वन्दना करूं, सदा उनकी छवि उर में धरूं।
उन्हीं का चन्दन, उन्हीं का वन्दन, उन्हीं का अभिनन्दन मैं करूं।।
प्रेम से पावेंगे उनको, नमन योगेश्वर विष्णु को।
जगत के पालक पोषक को, नमन योगेश्वर विष्णू को।।१।।
सरल, गम्भीर, मधुर, छविमान, जगत का करने को कल्यान।
अवतरण धरणी पर बहुबार, तोड़ने दुर्जन का अभिमान।।
कण्ठ में मोतिन की माला, शीश पर मुकुट दमक वाला।
कराग्रे शंख, कराग्रे चक्र, कराग्रे गदा पदम वाला।।
शताधिक रूप नमन उनको, नमन योगेश्वर विष्णू को।
जगत के पालक पोषक को, नमन योगेश्वर विष्णू को।।२।।
अनन्त आकाश गंग के मध्य, शक्ति के तुम हो अक्षय स्रोत।
ब्रह्म शिव या कोई भी रूप, जगत तुममें ही ओतप्रोत।।
साधना कभी न होवे कम, अर्चना उनकी हो हरदम।
पुष्पदल उन्हें, गंगजल उन्हें, क्षीरदधि उन्हें चढ़े हरदम।।
तुलसीदल सर्वोपरि उनको, नमन योगेश्वर विष्णू को।।
जगत के पालक पोषक को, नमन योगेश्वर विष्णू को।।३।।

प्रार्थना सुन लें प्रभुवर आज, हरें हम सबके कष्ट विषाद।
आपकी कृपा निरन्तर मिले, सुखद हो जावे हर अवसाद।।
मिल गया जिसे प्रभू आशीष, मिल गये उसे स्वयं जगदीश।
समर्पित तन, समर्पित मन, समर्पित जीवन धन है ईश।।
पुत्र हैं आशिष दो हमको, नमन योगेश्वर विष्णू को।।
जगत के पालक पोषक को, नमन योगेश्वर विष्णु को।।४।।
दर्शन कर चल दिये महापुर। सीमा पर सब स्वागत आतुर।।
राजा महाबली अरु रानी। शाकम्भरी, कौशल सम्मानी।।
सर्वप्रथम चन्दन, हारों से। आरति अरु विजयी नारों से।।
जय जय जय जय घोष कराया। स्वागत देव, मनुज मन भाया।।
शोभा यात्रा रूप नगर में। भ्रमण किया अरु गये महल में।।
चर्चा, कुशल क्षेम सब जाना। राजगुरू मुहूर्त प्रमाना।।
ज्योतिष को आधार बताया। ग्रह, नक्षत्र, गुण आदि सुनाया।।
शुभ मुहूर्त गुरुवर विचरावै। बसन्ती पंचमी सुयश बतावै।।
परिणय पावन पर्व मुहूरत। नगरजनों की खिलती सूरत।।
बासन्ती रंग में महपुर सब। स्वस्ति श्लोक से हो गुंजित सब।।
स्वर्णाभूषण विविध मंगाये। कलाकृति नित नई सुझाये।।
सज रहे नगर के द्वार-द्वार। नव तोरण बनते नव प्रकार।।
हर घर में था विश्वास भरा। उत्सव का अति उत्साह भरा।।
कोई शंख चक्र का चिन्ह लिखे। कहिं ऊँ, श्री अरु स्वस्ति दिखे।।

वादन, गायन की विविध-विविध। टोली रियाज करती बहुविधि।।
कोई जुटा बगिया महकाने। नए फूल बाहर से लाने।।
नव वस्त्रों से सज्जित होने। लगी प्रजा सपनों में खोने।।
युवराज्ञी के शुभ विवाह में। नगर भोज की अतुल चाह में।।
कुछ ऐसा था आनन्द अगाध। क्षमा किये सबके अपराध।।
जो आये प्रायश्चित कीन्हा। राजा क्षमा उन्हें सब कीन्हा।।
करने ऋषियों मुनियों को दान। मांग रहे नव दम्पत्ति कल्यान।।
शुभविवाह का बन रहा पण्डाल। भूमि हजार लट्ठ पर विशाल।।
पुष्प वर्षण परियाँ तैनात हैं। द्वार पर शोभा में व्याप हैं।।
भावनाओं में आनन्द वास है। नगर व पाण्डाल में उल्लास है।।

राजा रानी हैं खड़े, लेकर स्वागत माल।
समधी, समधिन का करें, डालें हिय में माल।।
महपुर की चतुरंगिनी सेना सहित बरात।
मणिकुण्डल दूल्हा बने, इन्द्रहु देख लजात।।
नगरसेठ भी चल रहे मणिकौशल के संग।
वरयात्रा लख आ गयी शक्ती शिव के संग।।

दरवाजे पहुंची वर यात्रा। मंगलगान सुनावै पात्रा।।
चन्दन, टीका चरन छुवावै। मणिकौशल महाबली उठावै।।
माल्यार्पण, हियपान लगाकर। दोऊ हृदय एक भये जाकर।।
द्वारचार हित वर उतारकर। स्वर्ण जड़ित पीढ़ा बैठाकर।।
मन्त्रोच्चार शुभारम्भ करके। देव, ईश का वन्दन करके।।
श्री गणेश, शिव, राम शक्ति की। अन्तर्मन से पूर्ण भक्ति की।।

जयमाला मणिकुण्डल लिये, वरमाला महरूप।
पुष्प गगन वर्षा करें, ब्रहम, मुनी, सुर, भूप।।
द्वारचार राजा किये, मणिकुण्डल अभिषेक।
जामाता ही पुत्र है, यह विचार रख एक।।

सुन्दर, सुकोमल, कुटिल केश वाली।
सुनयना, झुकाये, लजाये मृगाली।।
रत्न अलंकृत, स्वर्ण भूषित प्रभाली।
गौरांगिनी, लाल लहंगा निराली।।
मणि मन बसाकर पूजा की थाली।
वरमाला करों में सजाये विशाली।।
चली श्रेष्ठ जीवन का चुनने को माली।
मणि रूपा बनेंगे परस्पर ही माली।।

जयमाल गीत

शुभ-शुभ लगन हर्ष मय अम्बर,
धरणी पर धर मनुज शरीर।
विष्णु लक्ष्मी आये मानो,
दर्शन पा सब हुये अधीर।।
शुक्ल पक्ष के चन्द्र कला सम,
रूप महा का मणि की आभा।
इन्द्र शची उतरे धरती पर,
प्रखरित दीप शिखा की आभा।।
बाजे ढोल मृदंग बांसुरी,
परिणय की जयमाला बेला।
पहनाकर जयमाल परस्पर,
करो सुखद जनमन का मेला।।

शिव-संकल्प हृदय में रखकर,
मिथिलापुर में राम विराजे।
नहीं करों में धनुष प्रत्यंचा,
जयमाला हाथों में साजे।।
कृष्ण केश अरु कुटिल अलक में,
बदली से मुखचन्द्र निहारे।
ओंठ लालिमा गाल गुलाबी,
राजिव लोचन मौन पुकारे।।
कामदेव सम वर को पाकर,
रति रूपा वरमाला डाले।
शैल सुता को पाकर शिव भी,
जयमाला तिय के हिय डाले।।
मनभावन मन मुदित सुहावन,
अवनी से अम्बर तक लाली।
शिव के संग उमा ज्यों व्याहीं,
जगपति की करने रखवाली।।
सफल रहे दोनों का जीवन,
कीर्तिमान नव युगल रहे।
युग-युग वंशवृक्ष भी इनका,
सफल सुफल सानन्द रहे।।

जयमाला के बाद में फेरों का शुभ कर्म।
आचार्य बतला रहे नवदम्पत्ति का धर्म।।
दम्पतियों का धर्म है, पूर्ण उभय विश्वास।
छल प्रपंच दोऊ मध्य में होवे नहीं निवास।।
रखें परस्पर प्रेममय, पति पत्नी व्यवहार।
दो शरीर एक आत्म बन सद्भावी आचार।।

पति का धर्म भरण पोषण, परिवार चलाना।
पत्नी की रक्षा, सन्ततियों को योग्य बनाना।
नशा, व्यवसन से दूर, आचरण आदर्शी हो।
है चरित्र सर्वस्य, भावहित में व्यापी हो।
धर्म, अर्थ अरु काम में पत्नी संग जहान।।
दोऊ का कर्तव्य है, दें परस्पर सम्मान।
पत्नी का कर्तव्य, आज्ञा पति की माने।
सास, ससुर पति सेवा को ही तीरथ जाने।।
पतिव्रत धर्म, सुलक्षण नारी, धरती हुई महान।
सावित्री बन शक्तिवती हो, धर्म सहित सम्मान।
सामन्जस्य परिवार में रखती है जो ध्यान।
संकट में पति संग रहे, नहीं विलगता भान।।
वचन सुना स्वीकृति लिया, भौंरी अग्नि समक्ष।
पैपूजी की रस्म फिर कुंवर कलेवा अक्ष।।
सम्पादित सब कार्यक्रम किये विधी अनुरूप।
डोली पर बैठा रहे महरूपा को भूप।।
गयी राजप्रसाद में, नयाकक्ष अतिशान।
मासिक का षोडश दिवस, शुभ प्रदोष कल्यान।।
शिव शक्ति एकात्म हित, प्रथम संकुचित ध्यान।
मणिकुण्डल संग होयेंगे, दो शरीर एक जान।।

महारूपा मणिकुण्डल संवाद

''लग रहा है मुझे आज ऐसा, स्वप्न में चाँदनी खिल रही है।
भाव की एक नैय्या भंवर में, प्रेम पतवार से बढ़ रही है।।''
''मूक मन है मगर कह रहा है, देख लो आज फिर तुम उन्हीं को।
है कृपा जिनकी होगी सदा ही, भावना हो हम औ तुम्हीं को।।
प्रेम है मार्ग कांटो से पूरित, सिर्फ संघर्ष ही एक मग है।
और आशा का दीपक जलाये, बढ़ रहा उससे सारा ये जग है।।''
प्रेम ही भाष्य है, प्रेम ही ग्रन्थ है, प्रेम पर न चलेगी कुल्हाड़ी।
प्रेम पंथ के दोनों पथिक हैं, प्रेम मंच के दोनों खिलाड़ी।।
भावना उच्च हो कर्म में भी, भाव की भूमि भी कुछ सबल हो।
प्रेम के दीप से दे उजाला, वासना हेतु ही न विकल हो।।
नेह का एक सागर उमड़ता, प्रेम का ज्वार ही बन गया है।
कुछ कहूंगा न तुमसे मैं क्योंकि, ज्वार मम हार ही बन गया है।।''

मधुचन्द्रयामिनी

मधुचन्द्रयामिनी जीवन के,
आकर्षण का प्राकट्य सिद्ध।
अर्न्तमन की आँखें खुलती,
अब तक संयम से रही बिद्ध।।१।।
इस प्रथम प्रणय की बेला में,
जब शयन कक्ष आये दोनों।
रोमांच नया, सुख अद्भुत था,
क्या कहें, सुनें, भाये दोनों।।२।।
एकात्मदीप प्रखरित करने,
डूबे सागर गहराई में।
इस महामिलन के मधुक्षण की,
भीनी-भीनी शहनाई में।।३।।
सिहरन से उद्घाटित भाषा,
यौवन तड़पन का रूप धरे।
संतृप्त हृदय के भाव मौन,
दावानल को उद्दीप्त करे।।४।।
नयनों से खिंचता आकर्षण,
थे अधर खिले के रहे खिले।
भीनी सुगन्ध में गतिमय हो,
दो कमल परस्पर आज मिले।।५।।
चुंबन, आलिंगन, मोहन से,
यौवन के थिरके भाव वयम्।

षोडश कलरव में दो शरीर,
हो गये एक आकार स्वयं।।६ ।।
मिल रहे अंग प्रत्यंग मौन,
नख शिख वर्णन का ठौर नहीं।
स्वर्गिक सुख में आबद्ध युगल,
ज्यों क्षण जीवन में और नहीं।।७।।
दो हृदय हार्दिक अनुबन्धित,
भावों के रस में यूं भीगे।
लगभग समाधि की स्थिति में,
सुख में डूबे, सुख में भीगे।।८।।
निःश्वास और विश्वास हृदय,
हो गया समर्पण भाव पूर्ण।
धन ऋण ऊर्जा संयोजन का,
सृष्टिः संचालन चक्र पूर्ण।।६।।
बीजारोपण सन्धान सफल,
जग संचालन की विधा यही।
नव दीप प्रकाशित होवेगा,
श्रंखला भाव की नदी बही।।१०।।
रति मदन प्रभाव विलुप्त हुआ,
स्वर्गिक ऊर्जा का रहा भास।
मणि–महा शक्ति–शिव संयोजन,
नवस्रजन जगत करने विकास।।११।।
उत्कर्ष शिखर से अवरोहण,
विश्राम दिशा की ओर चले।

मन विद्यमान के चिन्तन में,
भावी रूपों को सोच चले।।१२।।
कैसा होगा भावी स्वरूप,
जग के भविष्य की संरचना।
युग-युग से युग तक परिवर्तन,
युग-युग विकास की अभि रचना।।१३।।
होगी किलकारी आंगन में,
गूंजेगा मम नन्हा प्रसाद।
लघुरूप धरे हो ईश स्वयं,
जो हर लेगा सारा विषाद।।१४।।
एकात्म मिलन का लक्ष्य रहा,
जीवन पाने का साधन है।
पीढ़ी दर पीढ़ी जीने की,
यह कला नहीं क्या पावन है?।।१५।।
चल रही इसी विधि सृष्टि क्रमिक,
अरु जन्म मरण का शाश्वत क्रम।
नर में नारायण बस बस कर,
रच रहे सदा माया अरु भ्रम।।१६।।

आनन्दोत्सव व उनकी स्मृति। सर्वप्रजा की भी थी स्वीकृति।।
मणिकुण्डल को समझें जानें। उनको भी कुछ ज्ञान बताने।।
महाबली इस हेतु प्रश्न कर। शासन, नीति बताते शुभकर।।
व्यसन हीन अरु स्वत्वमय, युवा, शील, कृतज्ञ।
शीघ्रकार, सुचिता सहित, दूरदर्शी, कृतविज्ञ।।
स्मृतिवान, बलवान गुण, वक्ता, कुशल, समर्थ।

शत्रु प्रेम, भय, उचित जो, समृद्ध अस्त्र अरु अर्थ।।
सत्यपूर्ण, छलकपट नहिं, दैव सम्पन्न सुबुद्धि।
राजा उत्तम है वही, प्रजा रखे सद्‌बुद्धि।।
श्रेष्ठ श्रेष्ठतर मन्त्रिवर ही राजा की शक्ति।
निर्भय हितकारी वचन, यह है उनकी भक्ति।।
राजा, राष्ट्र, अमात्य, बल, दुर्ग, कोष, मित्रादि।
राज्य अंग हों समन्वित, वर्षण करें सुखादि।।
दुष्ट दलन, पालन प्रजा, नीतिवान महराज।
न्याय, सन्धि, रणनीति का, ज्ञानी हो या राज।।
भुजबल, सेना, कोषधन या मित्र् निर्बल होय।
कुशल राज्य शासक नहीं, रह सकता है सोय।।
नहीं द्वेष नहिं चोर भय, धर्म परायण राज।
स्वास्थ्य, सुखद, धर्मानुरत, शोक रहित है आज।।
धर्म राज्य, राजा करें, नहीं पड़े दुर्भिक्ष।
नहिं अकालमृत, चौर या परपीड़न या इक्ष।।
साम दाम अरु दण्ड भय, भेद नीति का ज्ञान।
शासन हित अनिवार्य है, इनका सम्यक भान।।
सब आश्रम में श्रेष्ठ है, गृहस्थाश्रम का रूप।
शील विनय ही अतिथि प्रिय, भले रंक या भूप।।
इन्द्रियजित, परहित सदा, उत्सुक नेह प्रसार।
ईश-भक्ति का भाव रख, सुख शान्ती साभार।।
देकर शासन नीति सुशिक्षा। मणि से जानने की कुछ इच्छा।।
मणि ने कहा पितृ मन मोरे। दीन्हिउ आज सुअवसर तोरे।।

वृद्धजनों अरु मात पिता को नित ही करें प्रणाम।
आयू, विद्या, बल सहित, बाढ़े यश सम्मान।।
मातु नमन से भू देवी का, प्रजापति भी पितु पूजा से।
सादर आज्ञा पालन से ही, सन्तति सिद्ध नहीं दूजा से।।
ब्रह्मचर्य ब्राहमण व क्षत्रिय ओज, तेज बल सूर्य समान।
धन अनन्त अपार वैश्य गृह, शूद्र कला में सिद्ध महान।।
एकचारिणी पत्नी व पति, अल्प मृत्यु का नहीं निशान।
सहज, सुलभ, भोजन, गृह, चिकित्सा, शिक्षा, वस्त्र समान।
वृक्ष, वनस्पति, हरी भरी अरु, औषधि लाभ करे तत्काल।
धान्य प्रचुर सद्भाव परस्पर, हृदय भाव सब रखे विशाल।।

मृदुभाषी, पावन, दया, सत्य, अहिंसक धैर्य।
क्षमा, अनुग्रह, दान अरु शरणागत रक्षैर्य।।
लोक प्रशंसित है वही, देव नमन कर माथ।
सद्भाव, सम्भ्रम सहित, हृदय प्रेम जग साथ।।
जगतसंचलन में आदि से, अब तक लागू सिद्धान्त।
सफल विफल जिससे भये, वह आकर्षण सिद्धान्त।

अति प्रसन्न सुनकर महराजा। मणिकुण्डल से पूछे काजा।।
आकर्षण सिद्धान्त सुनाओ। क्या है इसका रहस बताओ।।
खुश दिखने का करो प्रयास। सही खुशी यदि चाहो पास।
इस पर कर प्रकाश समझाओ। आकर्षण सिद्धान्त बताओ।।

ब्रह्माण्ड रचना, आकर्षण सिद्धान्त एवं सृष्टि सिद्धान्त
के ज्ञाता ध्यानरूप श्री मणिकुण्डल जी

श्री मणिकुण्डल जी का राज्याभिषेक

षष्ठम सर्ग

सिद्धान्त पर्व

स्रष्टि मानवानाम् सर्वाणाम्, आबद्ध वर्तते जन्म जीवनश्च सिद्धान्ते।
तानि सिद्धान्तै सर्व जीवाणाम्, ब्रह्माण्डनाम् आदि शक्ति करोति।।
आकर्षण सिद्धान्तः सृष्टि सिद्धान्ते प्रभवति।
आकर्षण सिद्धान्तः स्रष्टि सिद्धान्तः परस्पर पूरक भवति।

आकर्षण सिद्धान्त

जीवन तो एक सतत प्रक्रिया,
यह परासृष्टि का शाश्वत क्रम।
चलमान सदा जीवन होता,
इसमें न रहा कुछ भी है भ्रम।।
यह सृष्टि और आकाशपुंज,
शाश्वत जीवन के दर्पण हैं।
कर्षण, घर्षण से रचना का,
करते मानो अभिवर्षण हैं।
आकर्षण का अद्‍भुत रहस्य,
ग्रह या मानव के जीवन में।
आवृत्ति विचारों की जैसी,
ऊर्जा वैसी संजीवन में।।
ऊर्जा ही आदि अनन्त स्रोत,
अक्षय, अनादि शक्ती स्वरूप।
प्रभु निराकार का रूप यही,
निर्माण, ध्वंस हैं विविध रूप।।
आवृत्ति नकार सकारों की,
मस्तिष्क विचारों से चलती।
जैसा जिसका चिन्तन ठहरा,
उसकी वैसी परणति ढलती।।
कर्मों का स्वाभाविक हिसाब,
अर्न्तमन में होता रहता।

प्रभु प्रेमपूर्ण आवृत्ती में,
ऊर्जा का अभिसिंचन बहता।।
हर मानव में मस्तिष्क रूप,
ब्रह्माण्ड विचार बनाता है।
जैसे विचार आवृत्ति वहीं,
वैसा ही जग बन जाता है।।
कर सुखद सभी को सुख बांटो,
औदार्य विचारों से मन में।
निज में आकर्षण कर पैदा,
लाना गुरुत्व हर एक जन में।।
साकार स्वयं हो जाते हैं,
दृढ़ संकल्पित मानस विचार।
कर कर्म सफल आवृत्ति प्रबल,
युग बढ़े कल्पना लोक द्वार।।
मानस-गंगा का त्वरित वेग,
आवृत्ति निरन्तर लगातार।
तूफान उठा सकता जग में,
ज्यों जप साधक करता विचार।।
विद्युत, ग्रह, रश्मि, पवन घूर्णन,
जीवात्म प्रकृति कण अणु कंपन।
प्रभु की अनन्त माया कहकर,
ईशात्म अंश करता चिन्तन।।
ब्रह्माण्ड जनन का है कारण,
अणुओं में होना विस्फोटन।

है स्वतः निवारण प्रक्रिया में,
तारा विस्फोटन-संयोजन।।
सारा ब्रह्माण्ड सचल दल है,
चलना जीवन का द्योतक है।
अपनी धरणी मानो कण है,
अणु-गति परिवर्तन पोषक है।।
धरणी को कहते मृत्युलोक
पर नहीं नष्ट कुछ भी होता।
केवल परिवर्तन ही सम्भव,
आवृत्ति पुनर् पल-पल होता।।
आत्मा सम अमर सकल सृष्टी,
ग्रह त्रैगति सम जारी चिन्तन।
आत्मा शाश्वत परमात्म अंश,
निर्गत विलीनता का मंथन।।
जड़ नहीं प्रकृति तो चेतन है,
गतिमान निरन्तर रहती है।
कर विविध रूप ईशत्व प्रकट,
ऊर्जा-गंगा नित बहती है।।
दिल में आदर्शों की लहरें,
मस्तिष्क बांध बन जाते हैं।
लेकर आकार विचारों का,
मन भाव तीव्र हो जाते हैं।।
आकर्षण का सिद्धान्त यही
दूजे मन में है क्या? जानें।

भेजें तत् मन में संकर्षण से
निज मन का ही भाव बनाने।।
कल्पना बनती है यथार्थ,
यह कथन सत्य परिलक्षित है।
अदृश्य तरंगे कल्पित हो,
भावों को करती शिक्षित हैं।
जो आज कल्पना बिन्दु रचा,
था भूतकाल में कभी सकल।
है आज हकीकत जो कुछ भी,
गत कल्पभाव ही हुआ सफल।।
यह चक्र परस्पर चलता है,
जो विद्यमान था, पाया है।
हमने यह सोचा, यह पाया,
जग इसमें ही भरमाया है।।
विधि की विधि का है रहस यही,
जग में जग कर ही पाया है।
जो दीख रहा है अखिल जगत,
सब आदि प्रकृति जन्माया है।।

जीवन का यह चक्र नहीं रुकने वाला है,
जीवन का रथ कभी नहीं थमने वाला है।
इसमें मिले पड़ाव समझ जी मंजिल जिसने,
पल प्रतिपल हो दूर वही थकने वाला है।।

जड़ चेतन आधार सृष्टि मैथुन से माने।
पिता गगन को और मात धरती को जाने।।
ताराओं का मिलन अगर विस्फोट कर रहा।
दो ताराओं के मिथ से उपजा मिथक बन रहा।।
तारा ग्रह या मनुज पशू पक्षी गण या फिर,
विद्युत का आवेग मिलन में प्रकट हो रहा।
परिवर्तन, गति, युग्म प्रकृति में निःसंशय हो,
जगत नियन्ता की लीला में स्वयं हो रहा।।

आनन्द की अनुभूति में, सब कुछ मिला भूला विगत।
ऊर्जस्विता के तेज में, झंकृत हुआ सारा जगत।।
मस्तिष्क मन आबद्ध हो, ब्रहमाण्ड में कंपन करे।
जिससे तरंगित कृति प्रभू की शक्ति आवाहन करे।।
सुखद, शीतल शान्तिदा परिवेश भी साकार है।
प्रेम की सर्वोच्चता से सृष्टि शाश्वत सार है।।

सृष्टि हो या व्यष्टि मानव भावना,
ब्रहमाण्ड में मानस तरंगें गूंजकर।
ईश हो तुम हो जगत के, कृति रचो,
शक्ति तुमको प्राप्त होगी पूजकर।।
ब्रह्माण्ड को गति तीव्र भी अच्छी लगे,
आवेग, अवसर, प्रेरणा बलवान हो।
कर्म करने हेतु जो उद्यत हुआ,
सफलता के भाव का प्रतिमान हो।।

निराकार है भाव, भावना प्राण रूप में।
आदि शक्ति आवर्तन है, आवृत्ति रूप में।।
ईश तत्व का भान सकल जग में व्यापा है,
निर्विकार है सत्य, भाव सागर नापा है।।
भावों का अति ज्वार, विचारों का आलोड़न,
लहरों का टकराव, किनारों का आरोहन।
जितना विस्तृत पाट और गहराई जितनी।
अक्षय अनन्त जग सिन्धु, भावना पावन उतनी।।
आकर्षण होवे गुरुत्व या फिर विचार का,
आमुख हो आकृष्ठ, बने कारण प्रकार का।
संघर्षों का दौर सफलता के भावों से।
करे तिमिर का नाश, प्रखर रवि के लावों से।।
रखकर दृढ़ संकल्प, विचारों की आवृत्ती,
मन में हो विश्वास, भाव जिसका हो जैसा।
आकर्षण सिद्धान्त निरन्तर लागू रहता,
उसका यही रहस्य, जगत में होता वैसा।।

जड़ चेतन आधार सृष्टि मैथुन से माने।
पिता गगन को और मात धरती को जाने।।
ताराओं का मिलन अगर विस्फोट कर रहा।
दो ताराओं के मिथ से उपजा मिथक बन रहा।।
तारा ग्रह या मनुज पशू पक्षी गण या फिर,
विद्युत का आवेग मिलन में प्रकट हो रहा।
परिवर्तन, गति, युग्म प्रकृति में निःसंशय हो,

जगत नियन्ता की लीला में स्वयं हो रहा।।

प्रश्न एक मन उठ गया, महाबली के ध्यान।
पृथ्वी का आकाश में, कैसा रचा विधान।।

कहते हैं, मानस के विचार सब प्रभु विधान से होते हैं।
यह ज्ञात नहीं पर इतना है, प्रभु भी विचार में होते हैं।।
ज्यों ही विचार मन में आया, आवृत्ति तरंगें गुंजित हैं।
ब्रह्माण्ड हुआ सक्रिय उस हित, यह सत्य तथ्य अभिमण्डित
है।।
मानस विचार कंपित होकर, खुद ही चुम्बक बन जाते हैं।
ब्रह्माण्ड अखिल में कंपित हो, सुविचार वस्तु बन जाते हैं।।
मत गलत धारणायें पालो, चिन्तन से ही पथ पाते हैं।
यदि भाव गलत होवे मन में, कुविचार वस्तु बन जाते हैं।।
कर प्रेम शर्करा का मिश्रण, हो सोच सकार उड़ानों की।
निज से आगे निज दूत चलें, परिणाम कल्पना पाने की।।

आकाश अनन्त शरीर बसे हम रोम छिद्र में।

रोम छिद्र में ही अपना ब्रहमाण्ड बसा है।।
हैं प्रकाश के पुंज अनेकों सूर्य सरीखे।
किन्तु अन्ध का राज्य अनेकों बिन्दु बचा है।।
गर्भ गुफा में सृष्टि नियंता ने रचवाई।
गुप्त प्रयोगों से ऊर्जा का ओज लिया है।।
ऋषी, मुनी, विद्वानों ने अन्वेषण करके,
ज्ञान और विज्ञान मार्ग को खोज लिया है।।
मानव की उत्सुकता जब-जब जोर मारती,
हुआ सृष्टि निर्माण किस तरह जान सकेंगे।
सृष्टि रचैया की माया को समझ सके तो,
छिपे जगत के रहस अनेकों जान सकेंगे।।
मानव शरीर में ही रहस्य के पृष्ठ अनेकों,
कुण्डलिनी को करो जागृत, खुद पा लोगे।
बाह्रय तरंगों की अदृश्य शक्ती से निर्मित,

आदि सृष्टि सिद्धान्त

उत्सुकता बढती गयी, जामाता को ज्ञान।
राज्य, ब्रह्म, ब्रह्माण्ड का रखता पूरा ज्ञान।।
मणिकुण्डल कहने लगे, इसका गूढ़ अनन्त।
आदि सृष्टि से चल रहा, क्रमिक विकास पर्यन्त।।

घोर अन्धतम महान, शून्यता ही शान्तता।
न बल न ज्ञानता कोई, न जाग्रता न सुप्तता।।
न क्षिति, न भार ज्ञात था, न पंच तत्व ज्ञान था।
कालि कालिमा कराल, स्तब्धता का भान था।।
न थी प्रकाश की किरण, न गूंजना या शोर था।
न ग्रीष्म शीत ताप था, न कोई ओर छोर था।।
न प्राणिमात्र था कोई, जो नाप ताप ही लखे।
ध्वनि, प्रकाश, गन्ध या तरंग, स्वाद ही चखे।।
शून्यता ही शब्दता और शब्दता ही शून्यता।
विशेष ही सामान्य भी, सामान्य ही स्तब्धता।।
अनादि आदि से समय थमा-थमा ही वेश था।
गतिहीन या गतिमान का, न अर्थ कोई शेष था।।
प्रवाहहीन वायु में प्रचण्ड वायु वेग था।
हों ऊर्जा के पुंज पर न कोई उनमें तेग था।।
प्राक्सृष्टि का अनन्त रूप कौन कैसे कह सके।
परा प्रकृति के रूप को अभिव्यक्त कैसे कर सके।।
रसायनी न भौतिकी, न तन्तु जन्तु व्योम था।
अन्धकार था गहन, न सूर्य और सोम था।।
न थी प्रभा समुज्वला, न दीप सम प्रकाश था।
न था भरा, न रिक्तता, न दिख रहा आकाश था।।
अनादि ब्रहम का मगर कोई छिपा स्वरूप था।
अनन्त व्योम में मिला वो ऊँ कार रूप था।।

अथाह शक्तिपुंज का अदृश्य रूप जो स्वयं।
अजस्र शक्तिपात भी शिवत्व हित करें वयम्।।
ब्रह्म शक्ति की असीम, सीमा कौन जानता।
बिखरे हुये स्वभाव को, इक सूत्र में जो बांधता।।
ब्रह्म शक्ति ने रची ब्रह्माण्ड की अवधारणा।
परमाणु में कण में बसाई ऊर्जा की अवतारणा।।
ब्रहम तत्व, प्राण तत्व, चेतनता, ईशतत्व।
विविध भाँति आदि शक्ति रूप विद्यमान तत्व।।
व्याख्या अनन्त है मगर व्यक्त कर सकूँ नहीं।
वर्णन पार्थिव स्वरूप का, अभीष्ट हो रहा यहीं।
सृष्टिः का कण-कण अभिसिंचित जड़ चेतन हो।
आकाशगंगाओं के निर्माण का विमोचन हो।।
आकाश गंगाओं में अनेक सूर्य निर्मित कर।
प्रकाश पुंज शाश्वत हो और उसे प्रखरित कर।।
घूर्णन कर सूरज ने निज तेज को बढ़ाया है।
जड़ में भी चेतन है, यह सत्य मुस्कराया है।।
सूर्यों में तेज भर कर विचरण को छोड़ दिया।
तेजस्विता ने सूर्यों के पथ को भी मोड़ दिया।।
गुरुत्व तेज उनका परस्पर टकराया जब।
नाद ब्रहम घोर हुआ, गुंजन गहराया तब।।
सूर्यों के खण्ड और विखण्डन से निर्मित हो।
ग्रह, उपग्रह और ऊर्जा से अभिवर्णित हो।।

निज जनक सूर्य की प्रदूक्षिणा ग्रह करने लगे।
सौर मण्डल की धुरी मान सूर्य नमन करने लगे।।
अलग अलग ग्रह में तब धधकी अग्नि शमित हो रही स्वयं।
दिवा रात्रि, ऋतु मास आदि का हुआ रचित तब नियम स्वयं।।
अरब करोड़ों वर्ष शमन में, विविध सौर मण्डल द्युतिमान।
इनके मध्य कृष्ण छिद्रों ने अब तक रक्खा है अन्जान।।
निज मण्डल का सूर्य दिवाकर, बुध, गुरु, मंगल, वरुण विचार।
शुक्र, शनी, यम, पृथ्वी अपनी, उपग्रह सोम आदि भरमार।।
मूल खण्ड से विघटित होकर, तड़पे, कलपे थे सब भाग।
रही धधकती ज्वाला कैसे, पुनः मूल का बनूं विभाग।।
इसी आश में ही गुरुत्व बल, सौर शक्ति को श्रवण करें।
कर परिक्रमा अहर्निंशम् ही, घूर्णन बल संग नमन करें।।
कोई ग्रह रक्ताभ हो गया, क्रोध स्वयं पर आया था।
कोई पश्चातापों से ही काला पड़कर घबराया था।।
रो-रोकर कोई द्रवण हुआ, आकर नजदीक न मिलकर ही।
कोई रवि से दूरस्थ हुआ, उसकी तापों से जलकर ही।।
कोई कम्पित होकर बिखरा, कोई गति शून्य समान किये।
कोई हम सूर्य समान बनें, ऐसा विचार कर तीव्र हुये।।
सबकी अपनी-अपनी लीला, किस्मत सबकी अपनी-अपनी।
निर्धारित ग्रह स्थितियों से, पृथ्वी पर हलचल भी अपनी।।
इस तरह ग्रहों के विविध रूप, अरु अजब दशायें रचित हुईं।
ज्यों समय हृदय के घाव भरे, पृथ्वी भी शीतल क्रमिक हुई।।

निज ग्रह पर क्रमशः परिवर्तन कहलाते सृष्टिः का विकास।
इनके वर्णन से परिलक्षित है प्राक् जगत का इतीहास।।
फिर एक नया युग शुरू हुआ, धरणी पर कलरव प्रकृति करे।
जलभरी नदी, हिमखण्ड कहीं, ज्वालामुखि भी हुंकार भरे।।
थे कहीं गगनचुम्बी पर्वत तो कहीं समद की गहराई।
था कहीं सूर्य का ताप प्रखर, थी गुफा न धूप कभी आई।।
लाखों वर्षों का समय गया, फिर ईश तत्व भी मुस्काया।
कण में अणु में जो तत्व रहा, वह ऊर्जा बन करके छाया।।
जीवाणु और कीटाणु बना, शुक्राणु, बीज की रचना की।
लाखों प्रकार की सूक्ष्मजीव, पौधों, पुष्पों की रचना की।।
चल पड़ा अजब अभियान स्वतः, चर-अचर जीव को लाने का।
इन विविध अणू के मिश्रण से, जीवन को जग में पाने का।।
वायू, जल, अग्नी का प्रवाह, संवेग प्रदाह तरंगित हो।
क्षिति अंतरिक्ष के विविध रूप, जड़ में चेतन में विम्बित हो।।
चल पड़ा सृष्टि में हलचल का, अभिमिश्रण या प्रतिवर्तन का।
जीवन के सूक्ष्म प्रकारों से कुछ वृहद जीव को जीने का।।
अतिरेक ग्रहों में भी ऐसी प्रक्रिया निश्चित चलती होगी।
ब्रह्माण्ड विविध में भी सम्भव जीवन की लौ जलती होगी।।
शायद सबकी विधि पृथक रहे, पर ईश तत्व ही प्राण बने।
जड़ भी चेतन है, व्याप रहा, जड़ता में भी ईशत्व घने।।
स्रष्टिः का करती संचालन, वह पार्श्व शक्ति, वह ईश शक्ति।
जिसके बिन सब अस्तित्वहीन, वह दिव्य अलौकिक आदि शक्ति।।

त्रयशक्ति पुंज निर्मित करके, सत रज, तम की उत्पत्ति करी।
ब्रह्मा, महेश, विष्णु में भी तीनों देवों की शक्ति भरी।।
परमाणु बसे तीनों तत्वों ने ही त्रिदेव का रूप धरा।
अक्षय, अनन्त, अतुलित ऊर्जा, का है जिनमे भण्डार भरा।।
एकात्म अलौकिक शक्ति प्रखर, थी पंचतत्व की संरक्षक।
जीवाणु और ले प्रकृति अंश पशु पक्षी और रचे तक्षक।।
कल्पना शक्ति की व्यापकता लघु में पिपीलिका तक पहुंची।
हाथी और डायनासोर तलक काया विशालता की पहुंची।।
अज, अजा, महिष, वृष, धेनु, अश्व, मूषक, विडाल, चित्रक, शूकर।
गज, सिंह, व्याघ्र, अतिभार, तुंग, गर्दभ, श्रृंगाल, चमरी, कुक्कर।।
मार्जारि, नकुल, पिंगाक्ष, शशक, दर्दुर, कपि, उष्ट्र, उलूक, काक।
शुक, पिक, मयूर, चटका, कपोत, कुक्कुट, जल कुक्कुट, चक्रवाक।।
चातक, वक, मकर, हंस, वर्तिक, गृध, बाज, चिल्ल, मृग, पक्षिराज।
गौरय्या, कौंच, नलिन, बुलबुल, स्वर्णाक्ष, नीलकंठ, बयाज।।
कच्छप अरु मत्स्य प्रकारों में, नागों के रूप हजारों में।
कंगारू, डायनासोर, याक, जीवन के विविध प्रकारों में।।
निर्माण सृष्टि में बीजरूप, जब श्रेष्ठ विधा बनकर उभरी।
जीवों, पौधों, चेतनता में, जड़ क्लोन रूप होकर निखरी।।
निर्माणों के निर्माण क्रमिक ले भाँति-भाँति के रूप चला।
हर ग्रह में पृथक-पृथक ढंग से नवरचना का युग दौर चला।।
पालक विष्णू और ब्रहमदेव जो सृष्टि रचयिता कहलाये।
मन ही मन में चिन्तित रहते सो दिव्य जीव थे जन्माये।।

उनका मस्तिष्क प्रखर होवे, वे संस्कारित हों सुयशवान।
बल में समान मेरे होवें, हो यही जगत का विधि विधान।।
हर पिता अधूरे निज कारज, सन्तानों में पूरित लेखे।
निज से आगे जब पुत्र बढ़े, हर्षित होकर उसको देखे।।
तब सृष्टि खेवैया विष्णु से, ब्रह्मा जी ने यह राज कहा।
क्यों आदि शक्ति जगदम्बा ने ग्रह रचनाकर यह काज कहा?
निज सन्तति मानव के माध्यम ग्रह के विकास करने होंगे।
अतिश्रेष्ठ उन्हीं में देव बनें, निकृष्ठ दनुज दानव होंगे।।
कुछ भीमकाय, लघुकाया में, कुछ दृश्य अदृश्य चितेरे भी।
कैसे अभिव्यक्ति परस्पर हो, संस्कार पृथक होने पर भी।।
लख परा रसायन और परा भौतिक यौगिक का उच्च्च मेल।
मानव मस्तिष्क बनाकर के नवयुग का शाश्वत हुआ खेल।।
आवश्यकता आविष्कार जनक, थी क्षुधापूर्ति करनी जब तो।
जीवाणु, पशू, पक्षी, मानव जीवों को जीना था अब तो।।
सबने अपने आहार चुनें, फल, शाक, मांस, विष्ठा खाया।
पत्रों, काष्ठों के साथ-साथ, दुग्धामृत या जो भी पाया।।
वृक्षों, लतिका, जलकुम्भी या पौधों के रूप विविध उभरे।
वनस्पति औषधि रूप लिये, थल में, जल में आकर बिखरे।।
जीवनदाता अक्षय सम्पद की बीजरूप में कर प्रस्तुति।
हो जीव, वृक्ष, चेतन, या जड़, करते सब प्राणतत्व स्तुति।।
इन विविध ग्रहों में विविध-विविध, वायू मण्डल थे हुये रचित।
थे प्राण तत्व भी पृथक-पृथक, थे जीव प्रकृति भी पृथक रचित।।

जलवायु परस्पर भिन्न हुई, पर थे तरंग से जुड़े सभी।
उस ईश शक्ति की छाया में, कुछ में समानता बनी दिखी।।
सब ग्रह विकसित हो चले मगर, गति, दिशा सभी की अलग रही।
मानव, दानव, अन्तरिक्ष देव, के नाम विविधता विलग रही।।
थे किन्हीं ग्रहों में मांस जीव, तो किन्हीं ग्रहों में धातुक भी।
कुछ में यदि काष्ठ शरीर धरे, कुछ में तन वायु तरंगित भी।।
थे प्राण तत्व भी पृथक-पृथक, सबकी तकनीक जीवता की।
ग्रह की जलवायु जहाँ जैसी, जीवों की वैसी रचना की।।
ध्वनि, वायु, प्रकाश, तरंगों से कुछ ग्रह में हुये परागण थे।
अर्न्तग्रह जीवों की युति से नवजीव बने ज्यों शिवगण थे।।
शिवगण जग का शिव करने को, जिससे सृष्टी का हो विकास।
ब्रह्माण्ड अखिल में विष्णु तत्व, पालक बनकर लाते प्रकाश।।
कुछ प्राण वायु जल से पाते, कुछ तेल चितेरे कहलाते।
कुछ बैटरियों या विद्युत से या अन्य वायु से चल जाते।।
कुछ में सूर्यानी से जीवन, कुछ सूर्यानी से हीन जियें।
कोई बिन वायू और कोई वायू से ही जाज्वल्य किये।।
कुछ उष्ण ताप में जीते हैं, कुछ शीत-शीत में ही जीते।
कुछ तो सामान्य भाव रखते, कुछ हैं विशेष जीवन जीते।।
लेकिन चलना ही जीवन है, ऊर्जा का अभिऊर्जन करने।
अन्दर बाहर की सक्रियता, सम्यक, पूरक बनकर करने।।
सूरज, ग्रह, तारे केन्द्रों पर घूर्णन परिक्रमा नहीं करें।
तो ताप वेग से वंचित हो, अक्षय ऊर्जा से नहीं भरें।।

उनके मन मस्तिक में विचार, कल्याण सतत सक्रियता का।
अनुशासित रह पथ चालन कर, जीवन में सफल परीक्षा का।।
अनुशासन छोड़ चले जो-जो वे बिखरे, टूटे भटक गये।
बन धूम्रकेतु या क्षुद्रग्रही आवारा बनकर लटक गये।।

''तुमने सृष्टि रहस्य का, बतलाया सिद्धान्त।
रोचक, मोहक है यही, आगे क्या वृत्तान्त।।''

इक नव प्रभात आया जग में, मानव की लीला विकस चली।
नहिं जीव मात्र बनकर मानव, साबित हो सकता महाबली।।
मानव मस्तिष्क प्रखरता से, चिन्तन मन्थन अभिवन्दन से।
औरों से साबित अलग हुआ, भावों के भाव विखण्डन से।।
पशु-पक्षी को छोड़ा पीछे, देवों, दानव को सिखा दिया।
सृष्टि नियन्ता के अपूर्ण को पूर्ण करेंगे दिखा दिया।।
अग्नी में ऊर्जा स्रोत प्रथम, जल की गति से गतिमान हुये।
अध्यात्म, आत्म, परमात्म प्रकृति से मन मस्तिष्क प्रशान्त हुये।।
मन के सुर पक्षी कृत्यों ने, जब दनुज भाव को ललकारा।
बढ़ चली सृष्टि, खिल उठी वृष्टि, से आदि शक्ति की जयकारा।।

महाबली पुनि पूछते, आदि सृष्टि आयाम।
कैसे बिखरे व्योम में, क्या सबमें व्यापे राम।।

शान्त, प्रशान्त, सुशान्त भाव था अखिल विश्व का,
नव ऊर्जा का ज्वार शून्य सागर में लाने।
महानाद ने किया विखण्डन ताराओं का,
हुये रश्मिमय ऊर्जस्वित जाने अनजाने।।

थे तारागण ऐसे जिनमें द्रव था केवल,
या गैसों के पुंज अनेकों घनीभूत थे।
अम्ल दुग्ध को खण्ड विखण्डित करता जैसे,
तत्व विरोधी धाराओं से अभीभूत थे।।
फटित दूध से ज्यों पनीर पाया जाता है,
महा प्रलय से नया सृष्टि-इतिहास बन गया।
समय-समय पर क्रमशः ब्रह्माण्डों की रचना,
परम्पराओं का अपना इतिहास बन गया।।
लगता था कण न्यूनाधिक आकारों वाले,
छितराये हों अखिल व्योम में गहन रूप में।
पाकर वायु प्रचण्ड वेग से हिलते चलते,
ऊर्जस्वी, मदमस्त, तरंगित विविध रूप में।।
तारागण ना थे पिण्ड मात्र, इनमें जाग्रत था खुद जीवन।
इनके मस्तिष्क प्रखर मन थे, शाश्वत चलने का था यौवन।।
जो ठहर गये बीमार हुये, भंगुर हो लोड़ित लुप्त हुये।
लेकिन बाकी में जोश रहा, न रुके, झुके न सुप्त हुये।।
इनमें सबमें थे राम रमे, सब राम कृपा की ही माया।
यह रामकृपा से जान सका, श्री राम नाम सबको भाया।।
अन्तरिक्ष में तारागण यूं भटक रहे हों,
लक्ष्य रहा अज्ञात निराश्रित लटक रहे क्यों?
आदि शक्ति ने तब उनका नैराश्य हटाने
रची योजना ध्यान, निरर्थक भटक रहे क्यों?
करें विखण्डन ताराओं का, उनका निज परिवार बनायें।

निज परिवार संभालो, ऐसा भाव बना उसमें उलझायें।।
दायित्व बोध से हीन युवा स्वच्छन्द विचरते,
रीति-नीति का ध्यान उन्हें कैसे सिखलायें।
परिवार बोध का भाव जगाकर उनके मन में,
कीर्तिमान कार्यों का करके हम दिखलायें।।
परिवारों की अपनी-अपनी रचना होती,
कोई पुरुष प्रधान कहीं पर सत्ता माँ की।
कहीं प्रमुख आदेश सिरों पर,
कहीं विवादों की ही झाँकी।।
कहीं सर्व सम्मत निर्णय से,
एक दिशा पर चलना जाना।
कहीं विरोधाभासों से ही,
अलग-अलग पथ को पहचाना।।
कहीं संगठित होकर चलना,
उच्च विकास लक्ष्य को पाना।
कहीं फुटव्वल आपस करके,
क्षतविक्षत परिवार बनाना।।

ऐसे ही कुछ दृश्य दिखाई देते हैं, आखिर क्यों भगवन।
ग्रह में विग्रह बसा हुआ है, क्षुद्रग्रहों का आवारापन।।
तारामण्डल के तारागण सूरज बनने,
बनकर निज परिवार बनाने को व्याकुल हो।
पृथक-पृथक आदर्शों, मन की स्वतः तरंगों,
से अपना संसार बनाने को व्याकुल हो।।

हलचल इक ब्रह्माण्ड अखिल में युग ले आई,
ताराओं के मिलन परस्पर विस्फोटों से।
इधर-उधर टकरा जाते थे मदमस्ती में,
सृजन ग्रहों का स्वयं हो रहा था चोटों से।।
ताराओं का मिलन क्रान्ति का रूप धरे था,
ज्यों शरीर से क्लोन सरीखे ग्रह थे निकले।
अपना निज परिवार संभाले सूरज तारा,
अन्तरिक्ष में अलग-अलग पथ पर थे निकले।।
आकर्षण में दूजे सूरज या तारा के,
आने पर परिवारों में विस्फोटन होता।
ग्रह, उपग्रह, अरु क्षुद्र ग्रहों के आदि अन्त या,
उनकी लय, गति रचना का निर्धारण होता।।
एक सौर परिवार सूर्य की कर प्रदक्षिणा,
ग्रह उसके अनुशासित जीवन ही जीते हैं।
दूजे में गति कम या ज्यादा ग्रह की होती,
कोई हर्ष, विषाद भाव मन में पीते हैं।।
किसी सौर मण्डल में प्रायः टकराकर के,
ग्रह घर्षण विस्फोट सदा करते रहते हैं।
और किसी में समायोजना करके सारे,
सह अस्तित्व भाव से ग्रह विचरण करते हैं।।
हिममण्डल का सूर्य कल्पनातीत शीत से,

वाष्पों को शत शून्य सदा करता रहता है।
ज्वालाओं का रश्मिरथी कोटिश तापों से,
द्रवण, वाष्प कर अग्नि वमन करता रहता है।।
कहीं विविध ग्रह के तापों में अन्तर भारी,
शीत, ग्रीष्म के कर प्रहार वे विकल हो गये।
कहीं ताप सह ग्रह में हीरे, माणिक, मोती,
क्हीं जलधि वर्षण से चंचल अचल हो गये।।
कहीं स्वर्ण भण्डार कहीं मृद रूपी सोना,
कहीं अनन्त अपार भरा जल जीवन पाना।
कहीं बूंद-जल नहीं, नहीं जीवन की आशा,
कहे प्रकृति जलवायु, मगर ग्रह को पहचाना।।
कहीं अम्ल के सागर गागर में डाले हों,
गैसों का अम्बार कक्ष में लगा दिया हो।
हो प्रकाश का स्रोत या कि हो विविध अन्धता,
अन्धकार का दीप वहाँ ज्यों जला दिया हो।।
एक सौर मण्डल का सूरज रश्मि-रसी से,
अपनी सन्तति को अपने में बाँध रखे हैं।
दूजे में ग्रह भूल पिता को आवारा बन,
अन्तरिक्ष में विचरण द्वारा साध रखे हैं।।
सौर मण्डलों और ग्रहों की विविध परिस्थिति,
विविध जीव, पौधों, अणुओं की रचना करती।
जीवन का उनमें स्वरूप होता मनमाना,

आद्य प्रकृति भी परिवर्तन की रचना करती।।
कहें रसायन या भौतिक परिवर्तन जिसको,
वैज्ञानिक की भाषा सतही बन जाती है।
नहीं दीखता जीवन उनको कण में, अणु में,
जीवन को जड़ कह सन्तुष्टि मिल जाती है।।
क्रन्दन को जब नहीं सुना करते वैज्ञानिक,
तब-तब प्रकृति भयावह हो ताण्डव करती है।
ताण्डव द्वारा सिद्ध जरूरत पर कर देती,
कण-कण मेरा चेतन, आत्मा कभी नहीं मरती है।।
जीवन के इस शान्त रूप को नहीं जानते,
यद्यपि आत्मा हिला प्राप्त ऊर्जा करते हैं।
अणु, कण छोड़ो ग्रह व सूरज तारागण भी,
जीवित हैं तब ही जग में हलचल करते हैं।।
जीवन का क्रम शाश्वत चलता ही रहता है,
व्यक्ति मरण के बाद कीट शव में पलते हैं।
ताराग्रह निर्माण विखण्डन संयोजन भी,
मनुज पशू पौधों कीटों जैसे चलते हैं।।
जन्म-मृत्यु बनकर पूरक जैसे आते हैं,
युग विकास का अरु विनाश का क्रम चलता है।
ग्रह जन्मे हों युवा, जरा, निर्वाण सृष्टि क्रम,
परमात्मा ही जीवन रूपों में मिलता है।।
अन्तरिक्ष में कर विलीन ग्रह ने आत्मा को,

पथ प्रशस्त नव सौर मण्डलों की रचना हित।
वायु, तरंगें, जल, प्रकाश अरु ताप प्राण बन,
ताराओं के मूल पिण्ड की नवरचना हित।।

आगे फिर कहने लगे मणिकुण्डल वृत्तान्त।
महाबली रुचि से सुने उनके मुखरित कान्त।।

सूर्य परस्पर स्पर्धा में व्यस्त हो गये,
निजता के उत्कर्ष हेतु अभ्यस्त हो गये।
एकीकृत रहने के पथ को भूल विवश हो,
सौर-शिरोमणि भावानल में मस्त हो गये।।
भाव-शक्ति का रूप प्रखर अद्‌भुत लेखा है
जैसा मन में भाव जगत वैसा देखा है।
सप्तरंग अरु सप्त तरंगों से आवेशित,
सप्त स्वरों की दिव्य प्रभा सबने देखा है।।
एक सूर्य ने गति को अपने बढ़ा लिया था,
सबके हम सिरमौर बनेंगे, ठान लिया था।
अपनी रश्मि प्रखरता से आलोकित कर जग,
पल प्रतिपल उत्थान करेंगे मान लिया था।।
किसी सूर्य ने अग्नि ज्वाल को ही बल माना,
किसी सूर्य ने बल गुरुत्व का कर मनमाना।
विविध ग्रहों के निर्माणों से सृष्टि मोह में,
आकाश गंग के ताराओं ने जीवन जाना।।
ग्रह सब अपनी गति में चल अभ्यस्त हो गये,

सभ्यता संस्कृति हीन मनुज
जीवन पशुतर ही जीते थे।
शारीरिक बल को श्रेष्ठ मान,
शिक्षा चिन्तन से रीते थे।।
मानव भी पशु जैसा ही था,
जिसमें बुद्धी का था विकास।
बलशाली जीवों या कमतर,
से नहीं हुआ करता निराश।।
ले सत्य-धर्म, शक्ती-अर्जन,
कर बुद्धि प्रखर विश्वास भाव।
सत, त्रेता, द्वापर, कलियुग में,
संगठन तीव्रता का प्रभाव।।
संकल्प लिया कैसे प्रभुत्व,
हो शासन का प्रारूप सफल।
परिवार, कबीला, क्षेत्र विविध,
में भी लाया मानव छल-बल।।
मानव ने वाद चला डाले,
ऊर्जा के विविध रूप लखकर।
अधिकार किया ऋषियों ने तप,
सेवा, जाग्रत कुण्डलिनी कर।।
मानव ने भी पशुभाषा में,
मारा, काटा, नोचा, खाया।

फिर सोचा कब तक चले यही,
शाकों,पौधों पर भरमाया।।
पाषाणों के बल पर लड़ता,
पाषाणों पर चढ़ जाता था।
थी जहाँ कन्दरायें मिलती,
उनमें निवास कर जाता था।।
दुनिया की करने प्रथम खोज,
पाषाणों को टकराया था।
चिन्गारी से जब अग्नि बनी,
सबको तब विस्मय आया था।।
युग परिवर्तन अभिनव आया,
देवों का दिव्य प्रसाद लिये।
पावनता का पर्याय प्रखर,
श्री शुभारम्भ नवयज्ञ दिये।।
भोजन, पूजन अरु धातु गलन,
की विविध विधायें रची गईं।
धन, धर्म, मोक्ष समझा मानव,
विनिमय की विधियाँ रची गईं।।
फिर समय चक्र कुछ और चला,
ज्यामिति का वृत्त हुआ विकसित,
तब विष्णु चक्र की खोज हुई,
आविष्कारों की गति प्रगणित।।

इक वृत्त हुआ उद्घाटित यह,
चल वृत्त अण्ड आकार बनें।
उस पथ पर चलकर सौर-मित्र,
जीवन के आशादीप बनें।।
कर चक्र खोज जगपालक ने,
यांत्रिकता का कर दिया घोष।
विद्युत सर्जन कर बहु विधि से,
मानव में आया नया जोश।।
होगा भविष्य में यन्त्र बिना,
संचार क्रान्ति का नव प्रयोग।
गति हो प्रकाश से बहुत अधिक,
ऐसे वाहन का है सुयोग।।
भाषा कथनी का है माध्यम,
मुख से, लेखन से कहो और।
मन से मनभाव तरंगित हों,
जानेंगे होगा सुखद दौर।।
पाषाण, काष्ठ, बारूद, लौह,
हथियार नाद व किरणों के।
मानस तरंग, विष, गंध, अग्नि,
लो बद्ध समय आचरणों के।।
मानवी सभ्यता में विकास,
कैसे हो सीढ़ी दर सीढ़ी।

विज्ञान और आध्यात्म जगत,
होगा विकास पीढ़ी-पीढ़ी।।
यंत्रों, तंत्रो की खोज और,
अभियन्त्रण का विज्ञान बना।
मनु सहित जीव की रचना के,
शोधन का शास्त्र विधान बना।।
मानव ने सतत प्रयास किया,
मस्तिष्क शक्ति वैचारण क्यों?
वैचारण से ही सृष्टि बनी,
कल्पना मूर्त होती है ज्यों।।
फिर जीव जन्तुओं पर शोधन,
करने खातिर संधान हुआ।
रच वृक्ष, वनस्पति, पौधों के,
अध्ययन का भी विज्ञान हुआ।।
फिर विविध कलाओं को विकसित,
करने का दौर हुआ चालू।
विज्ञान कला के मिश्रण से,
चांदी मिश्रित बनती बालू।।

सृष्टि–विकास

सृष्टिः के क्रमिक विकास का, सुनकर उक्त प्रसंग।
महाबलि राजा में बढ़ी, उत्सुकता और उमंग।।

आत्मा–परमात्मा, जड़ चेतन,
क्षिति अम्बर भी सहयोजक है।
निर्माण–ध्वंस या जन्म–मृत्यु,
धन ऋण का सूक्ष्म प्रयोजक है।।
नव बीज धरा पर फुल्लित हो,
नर–नारी एकाकार हुये।
अणु–प्रतिअणु जीवन रचनाकर,
भावों का सागर पार किये।।
सृष्टिः रचना में कदम बढ़ा,
ईशत्व दिशा को पाये हैं।
जग की शिवता करने खातिर,
चेतनता जड़ में लाये हैं।।
चैतन्य हुआ परमाणु हृदय,
से झंकृत जीवन है सारा।
जड़ में चेतन, चेतन में जड़,
जग प्रेम भरा, कण–कण प्यारा।।
सिहरन भी याद दिलाती है,
सन्तुष्टि भाव दरशाने को।
अन्तः में प्रेम–पयोधि, बाह्य,
में प्रेम जलधि बरसाने को।।

जग जीवन का ऐसा रहस्य,
क्यों आज स्वयं उद्घाटित हो।
दो हृदय, भाव, ब्रह्माण्ड मिले,
नव चेतन सूर्य प्रकाशित हो।।
सृष्टिः में छिपे रहस्य जान,
मानव मन हर्षित होता है।
ज्यों अन्ध नहीं लखता प्रकाश,
विवरण नहिं वर्णित होता है।।
जिनके हैं नेत्र प्रकाशवान,
वे दृष्टिपात कर पाते हैं।
आकार, रंग, गुणदोष आदि,
को सहज समझ वो पाते हैं।।
न प्रकृति छुपाती है रहस्य,
सब खुला खजाना पड़ा दिखे।
अपनी-अपनी दृष्टी जैसी,
वैसा ही कारण भाव दिखे।।
फिर क्यों कहते जाना रहस्य,
जब छुपा नहीं कुछ भी जग में।
जैसा विचार वैसी ही गति,
आकार, प्रकार बना जग में।।
नवग्रह दर्शित हैं हम सबको,
पर कुछ अज्ञात रहे अब तक।
उनकी छाया का लघु प्रभाव,
जीवन पर पड़ता आवर्तक।।

पुच्छल के तीव्र प्रभाव, ग्रहण
की हलचल भी लघुतम मानो।
सम विषम परिस्थिति जीवन की,
कछु कालक होती यूं मानो।।
यह सौर हमारा बंधा हुआ,
ग्रह-आकर्षण की डोरी से,
आकाश गंग में भ्रमण करें,
बहु सौर नियम बरजोरी से।।
न्यूनाधिक क्यों होते गुरुत्व,
गति, गतिपथ में अन्तर होते।
कहिं वलय, वलय से हीन कछुक,
जीवन के रूप विविध होते।।
जीवन्त सभी ग्रह भिन्न-भिन्न,
ढंग से संचलित हुआ करते।
आवारा, मृतग्रह अन्तरिक्ष,
में भटक, भटक यापन करते।।
अनन्त ब्रह्माण्ड में गंग पद्म,
के शंख सौर मण्डल ही में।
निज सूर्य सौर मण्डल स्वामी,
परिजन ग्रह हैं रखवाली में।।
मम पृथ्वी माँ हैं एक अंश,
अस्तित्व स्वयं का पहचानो।
हम बने सूक्ष्मतम बिन्दु,
अगम सागर के, ऐसा ही जानो।।

कृष्ण छिद्र

ज्ञान अनन्त अपार जान, उत्सुकता पायी।
प्राक् अन्तरिक्ष व कृष्ण छिद्र की महिमा भायी।।
मणिकुण्डल कहने लगे, धीर और गम्भीर।
विषय सुनेंगे ध्यान से, रखें लक्ष्य का तीर।।

है अनन्त आकाश में कृष्णछिद्र की माल।
रोम छिद्र का मनुज के तन में होता जाल।।
अनन्त व्योम में कृष्ण छिद्र, है स्रष्टि रचैया की माला।
जिसमें प्रयोग निर्माण करें, है आदि शक्ति ऊर्जा शाला।।
किस विधि जग का निर्माण करें, यह आदि शक्ति ने सोचा था।
ऊर्जा से पूरित करें अखिल, किस-किस विधि से यह सोचा था।।
निराकार, निरपेक्ष, निगुण, शाश्वत, गुरुत्व से परे घना।
बनकर प्रयोगशाला उसकी, था नाद ब्रह्म का घोष बना।।
मात गर्भ में बीज, भ्रूण बनकर ही जीवन पाता है।
कृष्णछिद्र का गर्भ मृत ग्रह में नवजीवन लाता है।।
ज्यों कृष्ण छिद्र का आकर्षण, उसमें सब कुछ था खिंचा चला।
ऊर्जस्वी बनकर खनिज सहित, आकाशगंग बन प्रवर चला।।
विद्युत का सागर भी असीम, कोटिश शंखों का था प्रकाश।
था महानील वैविध्य रूप, ऊर्जा का अन्तर्हित विकास।।
था बीज विश्व का पनप चुका, उसको वटवृक्ष बनाना था।

इस हित ऊर्जा को उगा जगा, बल कृष्ण छिद्र से पाना था।।

कृष्ण छिद्र में हैं बसे, रहस अगम अज्ञात।
ईश कृपा अरु साधना से तमस चीरकर प्रात।।
प्राक् स्रष्टि इतिहास के, पृष्ठ रहा जो खोल।
हैं खगोल विज्ञान के, राज अजब अनमोल।।
अन्ध तथ्य अज्ञात सब, ईश प्रकृति का खेल।
तत्व-तत्व का तत्व क्या, ना जाने क्या खेल।।

अनन्त है आकाश अरु असंख्य कृष्ण छिद्र हैं।
निर्माण स्रष्टि हेतु ही प्रयोग क्षुद्र-क्षुद्र हैं।।
इनमें अथाह शक्ति है, ये शक्तिपुंज स्रोत हैं।
जान न सकें इन्हें तो, व्यर्थ के कपोत हैं।।
जगत के निर्माण में, इक बिन्दु भी न व्यर्थ है।
आदि शक्ति रचना है, निहित कई अर्थ है।।
विज्ञान ज्ञान भी जहाँ, थका-थका दिखायी दे।
खगोल ज्ञानियों को भी, न राह कुछ दिखायी दे।।
आकाश की विशालता को, जो समझ सके नहीं।
तमाम बिन्दु, तथ्य हैं, जो जान न सके कोई।।
ब्रह्माण्ड को ब्रहमाण्ड के, सभी रहस्य का ज्ञान हो।
माया सकल प्रभू की है, उनकी कृपा से ज्ञान हो।।
निर्वाणित आत्मा जीवों की, परमात्मा में विलीन हो जाती है।
है रहस मृत्यु के पार कहाँ, कब कैसी प्रखरित ज्योती है।

है अखिल अनन्त अपार ब्रह्म की महिमा ही ब्रह्माण्ड बना।
ध्वनि, वायु, प्रकाश, गन्ध, खनिजों, शक्ति का स्रोत अखण्ड बना।
सृष्टी का क्रम शाश्वत चलता, निर्माण और निर्वाण तलक।
यह कृष्णछिद्र है मूलधार, इनमें रहस्य हर एक फलक।
इनके आकर्षण में खिंचकर, अन्तरविलीन में हो जाते हैं।
अनन्तकोटि लघुतम होकर सब आत्मसात हो जाते है।।
क्या परा रसायन की प्रक्रिया, या सूत्र रसायन के चलते
कुछ ज्ञात नहीं अनुमान सकल, या स्वप्न संदेशों से मिलते
भौतिक या पराभौतिक शक्तिः, जिसमे विलीन होते जाते।
कृष्णछिद्र, गुरुत्व अरु आकर्षण, तीव्रतर विशाल होते जाते।।
ग्रह, तारा, उपग्रह, आकाशगंग जब उसमें लय हो जाते है।
एकात्म अरु एकाकर, सकल, मनु को अज्ञात हो जाते है।
यह सृजन, संचलन संहारण सृष्टिः का शाश्वत है प्रबन्ध।
अति दीर्घकाल की यह प्रक्रिया, इसमें निर्मित जीवन निबन्ध।।
जीवन की तरह विविध ग्रह भी या तारे मृत हो जाते हैं।
इन कृष्णछिद्र में आश्रय पा, नवजीवन फिर वे पाते हैं।
जीवात्म सदृश गंगाओं के इनमें प्रवेश जब अंश हुये।
जो ध्वनि, प्रकाश, जलवायु दिखे वे बहिर्सीमा के कंस हुये।।
इसमें प्रवेश कर सकल, सकल, अति घनीभूत हो जाते हैं।
अति घनीभूत फिर क्या होता, हम ज्ञात नहीं कर पाते हैं।।

इसके आगे कुछ लखे नहीं, जाज्वल्य रश्मि के बाद गहन।
तम ही तम है या अगम अगम, हैं, परम आत्म का रूप सघन।।
इन कृष्ण छिद्र के कारण ही परिवर्तन जगती में होते।
शाश्वत प्रक्रिया यह चलती है हम जगते हैं या हैं सोते।।
सृष्टिः रचना के हेतु विविध, इन निर्माणी को रचकर के।
परमात्मा ने जब सृष्टि रची, नव चमत्कार थे प्रभुवर के।।

सृष्टि, अन्तरिक्ष एवं परा ज्ञान

यह कृष्ण छिद्र का वर्णन था,
अब पराशक्ति का भी सुन लो।
दृष्टव्य नहीं अनुभव होगा,
कुण्डलिनी सिद्ध तभी कर लो।।
उद्भव विचार का निराकार,
शाश्वत होकर भी अनायास।
हो गया विश्व की रचना को,
ज्यों चीर अन्धता को प्रकाश।।
जड़ में भी चेतनता विकास,
कल्पना सृष्टि का मूल भाव।
यह बने विविध आयामों की,
कल्पना प्रेरणा का प्रभाव।।
चल पड़ी तरंगें रेखांकन,
करने अनन्त ब्रहमाण्डों के।

कोटिक अनन्त भी सूर्य रचे,
बहु ग्रह उपग्रह होवें उनके।।
रच सूर्य सौर मण्डल खातिर,
पालक हो, संरक्षण दो उनको।
ग्रह बने विलक्षण अत्याधिक,
इक यन्त्र समान रचा सबको।।
घूर्णन के खातिर धातु द्रवित,
भारी-भारी उनमें डाली।
चुम्बकत्व वेग का प्रबल भाव,
करके ग्रह रचना कर डाली।।
अन्तर्जालों से कस करके,
सबको आपस में जोड़ दिया।
अन्तर्जालों के विविध रूप ने,
ग्रह, उपग्रह, रवि मोड़ दिया।।
किसकी परिक्रमा करे कौन,
आकाशगंग भी बना दिये।
इक रची व्यवस्था बहुत वृहद,
सम्बन्ध परस्पर बना दिये।।
भूगर्भ सभी के अलग-अलग,
सुनियोजित ढंग से बसा दिये।
जड़ नहीं प्रकृति तो चेतन है,
ऐसे रहस्य कुछ रचा दिये।।
मस्तिष्क, हृदय, यकृत, नाभी,
इत्यादि सभी ग्रह में होते।

वे जीवन के खुद ही प्रतीक,
लेकिन वे कभी नहीं सोते।।
हैं आँख, कान इत्यादि सभी,
गतिमान भाव भी विद्यमान।
जीवन में जीवन ढूंढ रहे,
मानव जीवन का यह विधान।।
सब जीव, प्रकृति अपने-अपने,
ग्रह में धरती मानें जिसको।
वह बाह्य आवरण खाल सदृश,
अनुभूति धैर्य होता सबको।।
हैं बड़ी विलक्षण रचनायें,
अन्दर, बाहर अरु सतहों की।
जब एक क्रान्तिमय जोश भरा,
आकाशगंग में वजहों की।।
गति, अन्तर्जाल, प्रकाश आदि,
साक्षात प्रमाण बने इनके।
घूर्णन, परिक्रमा पथ संयम,
अनुशासन भाव दिखे सबके।।
भूगर्भ, सतह या अन्तरिक्ष,
जीवन के स्वतः प्रमान हुये।
हैं विविध शक्तियाँ लय इनमें,
जो ढूढें वे ही शान हुये।।
फिर कौन कहे जीवन्त नहीं,
जड़ में चेतनता नहीं भरी।

संयम, गुरुत्व, गति, पवन, रश्मि,
अन्तरजाल, विद्युतमयी धरी।।
है जो विकास या परिवर्तन,
हो रहे स्रष्टि में स्वयं-स्वयं।
गतिमान और जीवन्त रूप,
जीवन के सिद्ध प्रमाण स्वयं।।
परिवार, ग्रहों का बसा-बसा,
निराकार ने आकार लिया।
सूक्ष्माति सूक्ष्म से अति विशाल,
जड़ चेतन विविध प्रकार किया।।
धरती में जल जीवन कहते,
कुछ अन्य-अन्य ग्रह में होगा।
कुछ ज्ञात अज्ञात प्राणियों का,
निश्चित रहस्य उनमें होगा।।
मानव की रचना प्रकृति अंश,
कैसे की होगी यह जानो।
निश्चित विज्ञान विलक्षण था,
परिवर्तन ही जीवन मानो।।
मस्तिष्क रचा, चिन्तन निर्णय,
आवृत्ति तरंगों के खातिर।
मानव अरु विविध जीव-जन्तू,
धरणी पर अल्पकाल खातिर।।
कुछ करने का संकल्प लिये,
हैं राज प्रकृति के खोज लिये।

जो खोजेगा, वह पावेगा,
यह भाव हृदय में ओज लिये।।
आकाश गंग के ग्रह, उपग्रह,
अपने परिक्रमा पथ चलते।
लगता है प्रभु को खोज रहे,
देखो कब प्रभु इनको मिलते।।
हम अन्तरिक्ष में उलझे हैं,
आकाश गंग ब्रह्माण्ड आदि।
कर परा-अन्तरिक्ष का भी चिन्तन,
जिनकी व्यापकता है अनादि।।
है यही अनादि, अनन्त, अखण्ड,
अविनाशी अविचल, गुणराशी।
जो ज्ञान और विज्ञान परे,
कल्पनातीत हर युगवासी।।
न दृष्टिगम्य, न बोधगम्य,
श्रुति परे, भावना के प्रतीक।
मानस-तरंग में बन तरंग,
अक्षय अक्षत बनते सटीक।।
उनके बारे में कहना तो,
रवि को ज्यों दीप दिखाना है।
है नहीं ज्ञान कुछ भी मुझमें,
अनुभव, अनुमान मिलाना है।।
दृष्टव्य नहीं आकार सहज,
रंग, रूप कौन गा सकता है।

केवल अनुभव निज हृदयों में,
बन सूक्ष्म वहीं आ सकता है।।
परमाणु कणों में जो व्यापा,
हैं रूप धरे होंगे कितने?
इतने ब्रहमाण्ड रचा करके,
अन्तरिक्ष रचे होंगे कितने।।
अर्न्तजालों का महासृजन,
अभिव्यक्ति तरंगों का उत्सर्जन।
आकाशगंग का सम्प्रेषण,
कर नाद अनादि करें गर्जन।।
निज सौर-मण्डलों का संचालन,
ग्रह, उपग्रह की गति नाप-नाप।
अन्तरिक्ष, भूगर्भ, सतह का भी,
है स्वतः नियोजन आप-आप।।
परा-अन्तरिक्ष पर कुछ कहना,
अंधेरे में तीर चलाना है।
जीवन है उसका एक अंश,
उससे उन तक ही जाना है।।
उससे नाता जिसने जोड़ा,
वह परम ब्रह्म में लीन हुआ।
वह आदि-शक्ति, वह परम-ब्रहम,
का अंग बना संलीन हुआ।।

चर्चायें गम्भीर थी, विद्वत्जन आभास।
महाबली को भा गया मणिकुण्डल का रास।

राजनीति अरु सृष्टि मय,
धर्मनीति का ज्ञान।
गृहस्थाश्रम के बिन्दु कह,
दें राज अभिषेक प्रमान।।
सब आश्रम में श्रेष्ठ है,
गृहस्थाश्रम का रूप।
शील विनय ही अतिथि प्रिय,
भले रंक या भूप।।
इन्द्रियजित, परहित सदा,
उत्सुक नेह प्रसार।
ईश भक्ति का भाव रख,
सुख शान्ती साभार।।

मणि रूपा के शुभ विवाह के, दिवस बहुत आमोद मोद के।
राजकाज अनुभव करवाऊं, महापुरी का यश बढ़वाऊं।।
यह विधि सोच महाबलि बोले। होली का रंग भी अब होले।
करहुं राज अभिषेक मणी का। कृपा मिले हर ओर फणी का।।

कहें राज 'अभिषेक त्वम,
चैत्र शुक्ल में लाल।
'राम दरश बिनु राजपद,'
मणि बोले 'है काल'।।
महाबली बोले 'तुम जाओ,
राम दरश को राजा बनकर।
मातु पिता पत्नी संग जाओ,
राम दरश हित अवध पहुंचकर।।

मणिकुण्डल माने तभी,
गये मातु पितु पास।
अवधकूच अभिषेक कर,
राम दरश की आस।।

कीन्ह मन्त्रणा राज गुरू से। अनुराधा नक्षत्र उरू से।।
नगर माहिं डुग्गी पिटवाई। राजा मणिकुण्डल बन जाई।।
नियत समय शुभ लगन नियति पर। राजसभा में उत्सव कर–कर।
राजगुरू अभिमन्त्रित करते। सब मणिकुण्डल की जय करते।।
राजमुकुट मणि के मस्तक पर, महाबली जब शोभित कीन्हां।
अवध वैश्य सारे भारत के, मन में सुखद सुहावन चीन्हां।।
लगा ग्रहण का कष्ट कट गया, और खुशी का मेघ फट गया।
अवध, महापुर सुखद सुहावन, दुखीजनों का पर्द हट गया।

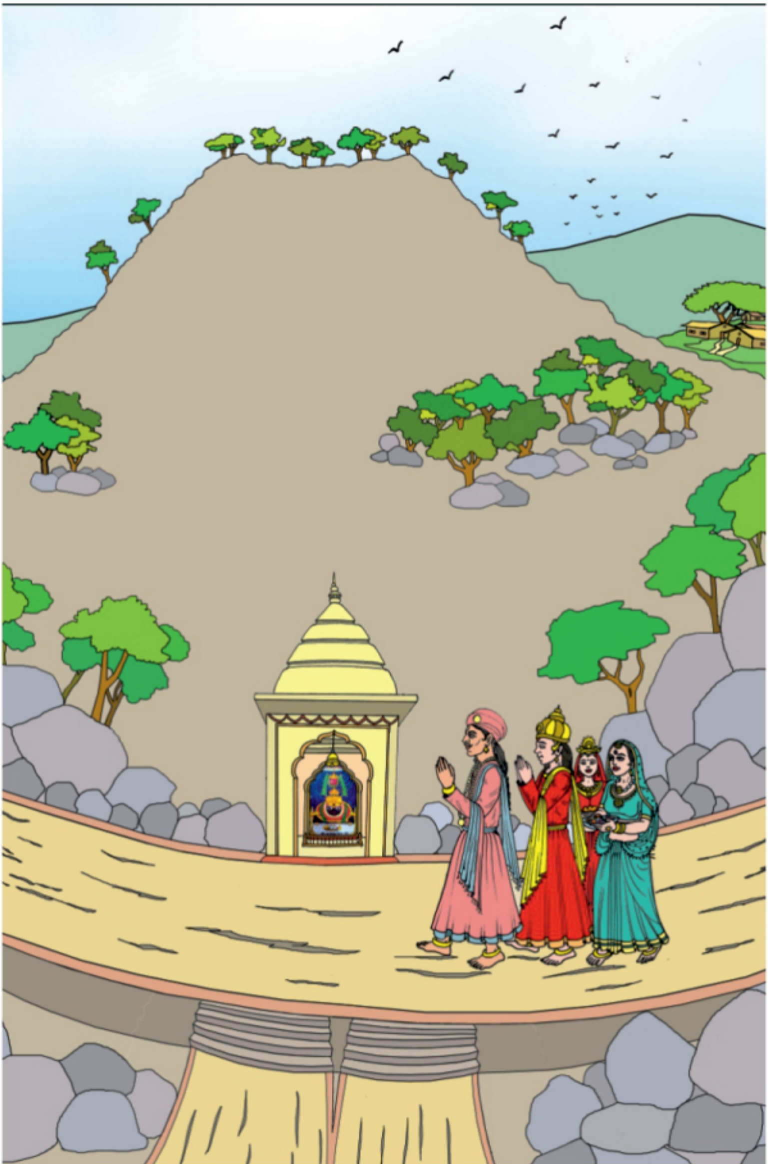

प्रभु श्री राम दर्शन हेतु अयोध्या जाते समय कामतानाथ (चित्रकूट) की परिक्रमा करते महाराजा मणिकुण्डल जी

चित्रकूट स्थित श्री अयोध्यावासी वैश्य धर्मशाला व मन्दिर में विराजमान श्री रामदरबार

सप्तम् सर्ग

आभार पर्व

न भवेत स्वामित्व भावः
भवेत प्रजाणाम सेवकः भावः।
राजा भूत्वा द्वेष वा प्रतिशोधस्य स्थाने
भवति न्याय क्षमयो भावः श्रेयष्करः।।
मन्यते स्वमूल स्थानम् तीर्थम्
यथा स्थिति ईश्वरस्य कृपा।
मन्यते सन्तोषं परम् सुखम्
एतत एव मणिकुण्डल-भाव अस्ति।।

राजगुरू ऋषिजन कहें, मणिकुण्डल मम राज।
त्वम् चन्दन वन्दन करूं, कर शतनाम विचार।।
सब नर नारी देश के, भये प्रसन्न अपार।
मणिकुण्डल स्तोत्र से, कर शतनाम विचार।।

मणिकुण्डल शतनाम स्तोत्रम्

मणिकुण्डलस्मणिकौशलसुतः महारूपा वल्लभम् शाकम्भरी नन्दनम्।
धर्मरूपः धर्मप्राणश्च अवध वैश्य प्रवर्तकम् कौशल वंशजम्।।
रुवैश्यकुलभूषणस्मणि माणिक जनकः अयोध्यावासी वैश्य आदि पुरूषम्।
तिलखीर प्रियस्महापुर शासकः सन्तरा प्रिय फलम् अयोध्या जन्मना।।

जीवनदीपः पारिजातपूजकः सत्यभूषणम्।
सिंहासनारूढ़ः रामकोटक्षेत्रेजन्मः किरीटभूषितम्।।
रामभक्तः ब्रहमपुराण–पुरुषः वैश्याणाम् गौरवम्।
साहित्यकार पोषकः, शुक्ल एकादशीवृतः शासनाष्टांगंम्।।

वैभीषण कृपापात्रः विशल्यकरणी प्रापकः चक्षुस्तीर्थफलम्।
सत्यनिष्ठः न्यायप्रियः सदाचरणा प्रतीकम्।।
दिव्य प्रकाशः सिद्धदाता धर्मराजा सत्यनिवेदकम्।
सौम्य वैश्यः इतिहास पुरूषः पुराण पुरूषः सतोगुणी वणिकम्।।
वीतरागीशासकः भावन नागरिकः महाभक्तम्।
पारिजात आरोपकः सुलोक पालकः हनुमत् कृपापात्रम्।।

बालाजी समकालीनः त्रैकाल साधकः मोहक व्यक्तित्वम्।

विनयस्य उपमा वर्णभद्रः शान्तचित्तम्।।

ब्रह्मवेत्ता मर्यादापथिकः भक्तपरित्राणम्।

कृपा, हनुमतभक्तः धर्मपुत्रः संस्थापकम्।।

शनिउपासकः धीरगभ्भीरः त्रिविक्रमम्।

महाबली धर्मपुत्रः तुलसीनित्यपूजकः तुलसीदल नित्य सेवकम्।।

भौवन नगरस्य किशोरः रविभक्तः शिवआराधकम्।

विष्णुभक्तः महाबली तनुजारमणः वैभीषणि दयापात्रम।।

गौरांग कश्यप ऋषि वंशजः दुःस्वप्ननाशकः राहुकेतवा कुप्रभाव विनाशकम्।

अरुण साधकः सोम प्रकाशः देवतात्मा शुक्रनीतिज्ञम्।।

पुरुषार्थ प्रतीकः प्रेरणाप्रदः उत्तर दक्षिण तादाम्याम्।

राष्ट्रीय एकात्मा, बृहस्पति सिद्धान्त अनुयायी बुद्धसदाशुद्ध कर्ताम्।।

महावैद्यः ऋतुज्ञपुरुषः उरुश्रेष्ठः परमार्थवृत्तम्।
मर्यादापथिकः, दिव्यमन्त्र सिद्धः धर्मसंवर्धकम्।।

धन संवर्धकः, सुखशान्ति प्रदायः, सर्वकार्य सिद्धकर्ता।

श्यामलकेशः गौरवर्ण सुन्दरः पीताम्बरधारणः सौम्यशान्ता।।

भेषजज्ञाता, खड्गः, रूद्रअंशः, सामप्रियः, योगपुरुषम्।

युगपुरुषः, सिद्धिपुरूषः, शुभेक्षणः, सत्फलदाता, महामानवम्।।

शतनाम का स्तोत्र कर, बढ़ी विचार भावना।
यही हमारे देवता हैं, इनमें हमारी चाहना।।
कर धर्मराज स्तुति, बधाई बार-बार दें।
देवतुल्य राज को, प्रणाम बार-बार दें।।

मणिकुण्डलम् स्तुति करूं, यह जन-जन में भाव था ।
इस हित करते पुनः पुनि, स्तुति में हृदय प्रवाह था।।

श्री मणिकुण्डल स्तुति

हे राम भक्त दयालु करुणा सिन्धु, जय मणिकुण्डलम्।
हे सत्य पथगामी प्रबल, दिग्दर्शकम् उरु मण्डलम्।।
भव भूमि भारत-भक्त मणिकौशल अवधसुत नन्दनम्।
युग पुरुष दुर्लभ देव-दर्शन, व्योम तन मन रंजनम्।।
क्षितिभार, विद्युत-शक्तिमय, जलधार मानस तारणम्।
विज्ञान, ज्ञान विचार अभिनव कल्पना अभिधारणम्।। १ ।।
योगेश-विष्णुः, राम, बजरंग, आदि शक्ती पूजकम्।
गोदावरी, सरयू सलिल, परिजात, तुलसी सेवकम।।
त्रय-शक्ति उत्स त्रयम्बके, कल्याण सृष्टी कारणम्।
संतरा, तिल, खीर प्रिय, शिव अंश धरणी पारदम्।। २ ।।
दिव्य मुखमण्डल विराजै, मुकुट मणिमय प्रखरतम्।
कर्ण कुण्डल, कंकणे कर, कुटिल केश ललाट त्वम्।।
हिय माल मोती, करधनी कटि पीत भगवा अम्बरम्।
धर्म पालक, दयासागर, कामना अभिपूरकम।। ३ ।।
नगर भौवन, तीर्थ चक्षुः, सत्कर्म क्षेत्र महापुरम्।

विघ्न नाशक गणपती सम, देवतुल्य पुरन्दरम्।।
निष्पाप, निर्मल मन निरन्तर, ज्योति प्रखरित सुन्दरम्।
कल्याण इह परलोक हित, तपलीन ऋषिगण कन्दरम्।। ४ ।।
कर श्रवण स्तुति भक्त की, हर कष्ट बाधा सकल मम।
सन्तान, धन, श्रीवान, विद्या दें सर्व सुख हे कल्पकम्।।

महाराज कुण्डल बने, जनता में उल्लास।
नवयुवकों में जोश था, कुछ होगा निश्चित खास।।

नगर सुरक्षा दल बना, किये जागरुक लोग।
देश राज्य रक्षा करूं, यही भावना-भोग।।
भारत माँ की साधना, सर्व रूप सम्पन्न।
जन-जन में सहकार हो, मिले न एक विपन्न।।
नगर, प्रखण्ड, प्रडाक के, जो वरदानी अंग।
राष्ट्र विरोधी तत्व को, कर देते अंग भंग।।
नगर राज्य अरु देश में, नगर सुरक्षा संघ।
जन-जन की जनसूचना, का है अद्भुत संघ।।
पुलिस गुप्तचर तन्त्र भी, जब निष्फल हो जाये।
अन्तःरक्ष स्वराष्ट्र हित, देश प्रेम मन भाय।।
भारत माँ के पुत्र यह, त्यागी, मौलिक-झुण्ड।
सबके मन में भाव निज, करूं समर्पित मुण्ड।।

प्राणाहुति देकर मिले, आत्म तृप्ति का भाव।
जन्मभूमि के हित मरूं, हर दिल में यह चाव।।
बाह्य आक्रमण के समय, होकर सजग सचेत।
शान्ति व्यवस्था में बनें, सहयोगी हर खेत।।
शान्ति समय में देश का, कैसे करें विकास।
विश्व गुरू किस विधि बने, इस पर करें प्रकाश।।
क्षेत्र-क्षेत्र में बन गये, नगर सुरक्षा कोर।
इनके अभिनव तन्त्र से, राज्य बने सिरमोर।।
राज्य बने सिरमोर, भावना राष्ट्रभक्ति की।
करते हैं पहचान, इन्हीं से राष्ट्रशक्ति की।।
अनुशासन की शक्ति से, अभिमन्त्रित प्रक्षेत्र।
जन-जन भाव संवारते सफल हुये हर क्षेत्र।।
कुशल राज्य शासन करे, साधे आठों अंग।
दायित्वों को समझकर, निस्तारण करें प्रसंग।।
मणिकुण्डल मन प्रश्न एक, कहाँ गया मम मित्र।
घात किया तो क्या हुआ, नहीं भूलता चित्र।।
विश्वासघात गौतम न करता। पूज्य विभीषण कष्ट न हरता।।
चक्षुःतीर्थ नहीं मिल पाता। राम आ गये पता न पाता।।
इसीलिये गौतम तो मेरा। है सच्चा शुभचिन्तक मेरा।।
ढूंढ़ो, घाती मित्र कहीं है? भेजो गुप्तचर जहाँ कहीं है।।

तीन दिवस तक ढूंढ गुप्तचर। दीन-हीन लाये एक पिंजर।।
तन, मन, धन से था कंगाला। लगता था ज्यों मरने वाला।।
आते ही मणिकुण्डल के पग। गिरा, रुदन करता था वह ठग।।
यह सुरा, सुन्दरी, घात, जुआ। मम दुर्गुण का फल प्राप्त हुआ।।
है जीत सत्य अन्तिम होती। चरित्र श्रेष्ठ वृत्ती होती।।
धर्मावतार तुम, मैं अधमी। अब समझ सका हूँ मैं उधमी।।
मणिकुण्डल करुणा कर बोले। यह क्या दशा बनी, मत रोले।।
गुरु-सुत हो तुम मित्र हमारे। क्षमा करहुं सो दोष तुम्हारे।।
किसी संग अब घात न करना। विप्र मित्र रख सद्आचरना।।
करता क्षमा नगर में रह ले। यदि तू धर्म, सत्य मन धर ले।।

गौतम को धनधान्य दे, नगर बसायो वीर।
अगर अधर्मी पुनि बना, कोऊ न हरियै पीर।।

बनकर के राजा महपुर के। महाराज से अनुमति करके।।
मात, पिता, पत्नी संग सारथि। मणिकुण्डल जी चले महारथि।।
सप्तश्रंग आश्रम जब आये। स्वर्गिक आभा मन हरषाये।।
तपस्थली ऋषि नमन बहोरे। शीघ्र रामदर्शन हित मोरे।।
रामटेक घाटी जा पहुंचे। शिखर चरण रज माथे ऊँचे।।
साक्षात प्रभु राम विराजे। पवन, अग्नि, पृथ्वी, जल साजे।।
लगा राम कण-कण में व्यापा। निराकार प्रभु अणु-अणु आपा।।

चलते-चलते बढ़ रहे, राज सैनिकों संग।
सिवनी जंगल पार कर, तीर नर्मदा अंग।।
कण-कण में शिवलिंग विराजे, शिवजी का आशीष यही है।
मातु नर्मदा पावन धारा, से निकला जो सिद्ध वही है।।
भेड़ाघाट प्रपात का, ऐसा अभिनव रूप।
गतितर की उपमा नहीं, नयन लखे नहिं भूप।।
धुंआँ-धुंआँ उच्छवास जल, मानस जलधि तरंग।
कुछ निर्णय न कर सके, मन मस्तिष्क प्रत्यंग।।
शारद मैया दरबार में पहुंचे सब मनधीर।
दर्शनकर अति धन्य हो गये सुधीर सुधीर।
देवी वन्दन कर रहा मणिकुण्डल परिवार।
शक्तिपात देवी करे उन पर बारम्बार।।

देवी वन्दना

माँ जगजनी जग संहारक, जग पालन हार भगवती माँ।
तुम महामहा परमा नित्या, हो विश्व ईश्वरी चण्डी माँ।
हरि नयनों में जो ओजरूप हो यज्ञ हवन में स्वाहा मंत्र ।
स्वधा श्राद्ध में वषट्कारमय, हस्व दीर्घ प्लुत् स्वर अभितन्त्र।
गायत्री, सावित्री, सन्ध्या विश्वधारणा मेरी माँ।
जग निर्माणी पालनहारी सृष्टि विनाशक अम्बे माँ।।

जगत स्वामिनी, अमृतरूपा विद्यामहा महामाया।
त्रिगुणा, मेधा, स्मृतिमोहा, श्रुती, रश्मि अरु हो छाया।
हीं श्रीं अरु क्लींरूपिणी, लज्जा पुष्टी तुष्टी शान्ति।
सौम्य असौम्य अनिंद्र्य सुन्दरी, अपरा परा ईश्वरी क्षान्ति।।
सत्य असत्य जगत में जो कुछ, भक्ति शक्ति की अभिनव प्रीति।
काल महा अरु मोहरात्रि हे जगत्पती हरि-हर की जीत।।
निद्रामग्न हुये ज्यो पालक, सृष्टि संचलन होकर क्लिष्ट।
असुर वृत्तियाँ होकर हावी मदमाती हो करती भ्रष्ट।।
अतः विष्णु जग पालनकर्ता जगो जगाओं जन-जन को।
असुर निकन्दन, तेहिं वध कन्दन, हेतु मात् वर दे मन को।।
मैहर में माँ शारदा, पर्वत त्रिकूट में रहती है।
सतयुग से कलियुग तक, माँ की महिमा हरदम रहती है।।
जो मांगो वह मिल जाता है, इस शक्ति केन्द्र जग जननी से।
अवध शीघ्र दर्शन करवाओ, प्रभु का हमको नैनन से।।
पूजन कर शारद मइया का, चित्रकूट की ओर चले।
शरभंगा अरु सिद्ध पहाड़ों, के दर्शन से शान्ति मिले।।
चित्रकूट में कामदगिरि की। मान मनौती अपने मन की।।
पूरण करें कामतानाथा। करै परिक्रमा ज्यों रघुनाथा।।
वन्दन भी करने लगे, राम दरश के हेतु।
पाकर प्रभु सानिध्य से, बने हुये प्रभु-सेतु।।

कामतानाथ वन्दना

प्रभु राम के सहारे, प्रभु-धाम तुम स्वयं हो।
कष्टों को दूर करते, मनकामना वयम् हो।।
संकट जब जिसपे आया, वह चित्रकूट आया।
प्रभु राम के सदृश ही, उसने सहारा पाया।।
हे कामदगिरी! शतत शत, तुमको प्रणाम करता।
जो रामरज हैं बिखरी, रख शीश नमन करता।।
तुमको नमन निरन्तर, तपभूमि राम की हो।
कर दो कृपा गिरीवर, गिरिरूप राम जी हो।।
मन्दाकिन स्नान कर लक्ष्मण टीला आय।
हनुमत धारा आदि में प्रभु का रूपक पाय।।
मुख्य द्वार कामदगिरी करें रात्रि विश्राम।
कलियुग में स्वजाति का मन्दिर, डेरा, धाम।।
होगा भव्य सुकीर्तिमय, सब जग में विख्यात।
अयोध्यावासी वैश्य के नाम रूप से ख्यात।।
कामदगिरि, गोदावरी, चित्रकूट सुरधाम।
निकट वामदा बस गया, अवध वणिक का ग्राम।।
चित्रकूट से वामदा ओर चला परिवार।
मणिकौशल के मिल गये, इष्ट, मित्र अरु यार।।

कुछ समवय, कुछ प्रौढ़ भी, कुछ अतिवृद्ध जनाय।
युवा जनों के साथ में, सब जन ही मिलवाय।।
कुशल क्षेम पूछी सकल, राम राज्य की बात।
राम अयोध्या आ गये, सुरुचि, सुमंगल गात।।
करने दर्शन राम के, चलो हमारे साथ।
या जब मन हो आइये, अवध में हैं रघुनाथ।।
अवध वैश्य सब पूंछते, साथ राज है कौन।।
जिनकी किरपा रथ चढ़े, रहे अभी तक मौन।।
मणिकौशल कहने लगे, यह है मेरा पुत्र।
'राम संग वन जायेंगे,' इसका ही था सूत्र।।
'मणिकुण्डल बालक भयो, राजा महपुर देश।
अवध वैश्य की शान है, महापुरुष का वेश।।'
अयोध्यावासी वैश्य का, एक मात्र सिरमौर।
ऐसा कहकर वणिक जन, होकर भाव विभोर।।
चन्दन, वन्दन कर रहे, कहें अवध की जान।
अवध वणिक जहँ रहत है, अवधपुरी वह मान।।
भरत आगमन की कथा, सुना रहे थे सोच।
इसी तरह से दो दिवस, गये बीत संकोच।।
बाल्मीकि आश्रम लखा, तमसा तट के पास।
जहाँ क्रौंच वध से हुआ, प्रथम कवी को भास।।

चलने को उद्यत हुये, रहो कछुक दिन और।
यहीं राम-अध्यात्म का सूक्ष्म निवासी ठौर।।
लेकिन दर्शन राम की, अभिलाषा का तेज।
लेकर विदा विनम्र हो, लोग रहे थे भेज।।
यमुना तट पर रथ पहुंच, मणिकुण्डल महराज।
यमुना पूजन में लगे, यम-भगिनी हित काज।।
यमुना जी ने प्रकट हो, दिया यही सन्देश।
विगत् जन्म के पाप से पूर्ण मुक्ति आदेश।।
लेकिन ब्रह्मावर्त जा, माँ गंगा के तीर।
बाल्मीकि आश्रम निकट, करना दर्शन धीर।।
विगत् जन्म का स्मरण, होगा तुझको वृन्द।
हिम आलय के चारधाम में, मन होगा आनन्द।।
यमुना का आशीष पा, पार किया रथ संग।
ब्रह्मावर्त बिठूर की ओर चले सब संग।।
विश्वधुरी गंगा तटे, पहुंचा जब परिवार।
मणिकौशल शाकम्भरी, का उत्साह अपार।।
महरूपा कुण्डलमणी, ने भी महिमा जान।
सैनिक व परिवार, सब ने कियो गंग स्नान।।
करते गंग स्नान ही, दृश्य सजीव दिखाय।
घटनाक्रम सारा दिखे, पश्चाताप सुहाय।।

माणा, नर-नारायण शिला, करते हैं उद्धार।
गौमुख, यमुनोत्री अरू बद्रीनाथ, केदार।।
स्वयं सिद्ध ही हो गया, कर्म बनावे भाग्य।
जन्म उसी या अन्य में, दुर् हो या सौभाग्य।।
मणिकुण्डल को दिख रहा, नारायण का रूप।
राम नहीं हैं विष्णु यह, लीला करते भूप।।
माँ सीता के रूप में, लक्ष्मी का अवतार।
शेषनाग-लक्ष्मण सभी, नमन अपार-अपार।।
मणिकौशल जी ने कहा, लोधेश्वर है पास।
रामेश्वर सम मान्यता, दूर करे वनवास।।
दर्शन वर्षों से नहीं हुये अतः करेंगे आज।
राम दरश सानिध्य हित, नमन करेंगे आज।।
लोधेश्वर अभिषेक कर, बोरलिया के धाम।
देववृक्ष एक मात्र जग, पारिजात शुभ नाम।।
पारिजात स्पर्श लख, चले अयोध्या ओर।
निकट पहुंच साकेत के, कुहू बोलते मोर।।
पल्लवित, पुष्पित, हरीतिम, वृक्ष में आनन्द था।
मुखों में मुस्कान थी, आत्मबल सानन्द था।।
गगन भी दूषण रहित, जलधार निर्मल थी बही।
निर्भय विचरते थे पशू, भावना जन थी सही।।

मलय सुगन्ध प्रवाहित, बेला और चमेली।
दुग्ध पिलाती गइया माता, संग में कई सहेली।।
सुन्दर–सुन्दर दृश्य सगुन, शुभ लक्षण नयनाये।
रामराज में है सुख वैभव, यह सब दर्शाये।।
किया अयोध्या नगर में, रथ ने जभी प्रवेश।
जनता भी उत्सुक भई, आया कौन नरेश।।
आया कौन नरेश, अयोध्या दर्शन पाने।
दूर देश से चला प्रभू, को आज मनाने।।
ऐसा सोचा बिन्दु, युवा ने प्रश्न कर लिया।
तुम हो कौन? अयोध्या को क्यों प्रस्थान किया।।
मणिकौशल उतरे तभी, हनूमान गढ़ पास।
बोले मैं भी अवधजन, यह मेरा आवास।।
रथ से उतरे सभी जन, घर में कीन्ह प्रवेश।
तब तक चर्चा हो गयी, नगर सेठ राजवेश।।
निकट पड़ोसी आ गये, मिलन में था उत्साह।
कहाँ रहे अब तलक हो, बोलो मेरे शाह।।
मणिकौशल ने तब कहा, "राम प्रभू के संग।
वन में प्रभु विलगित हुये, हम बिखरे ज्यों अंग।।
नगर, वनों में भटक कर, दक्षिण था दुर्दान्त।
मणिकुण्डल घटना कही, राजा बना प्रशान्त।।

जाना जब प्रभु राम जी, पुनः अयोध्या आय।
दर्शन पाने के लिये, मन हर्षित हुलियाय।।"
मणिकुण्डल ने प्रात ही, स्वर्णथाल सजवाय।
हीरा, मोती रत्न अरु भेंट कीमती लाय।।
अवध निवासी संग ले, चले राम दरबार।
चारों के मुख तेज था, श्रद्धाभाव अपार।।
मणिकौशल, शाकम्भरी, दशरथ स्मृति शेष।
मणिकुण्डल महरूप तो राम सिया के वेश।।
चर्चा करते चल रहे, ओर राम दरबार।
देखो कितना मिल रहा, अवधजनों का प्यार।।
पहुंचे जब दरबार में, राम सिया के पास।
अभिलाषा पूरी भई, दर्शन का विश्वास।।
मणिकौशल परिचय दिया, नगर सेठ पितुकाल।
चला आपके संग था, भटक हुआ बेहाल।।
सुत से लंकापति कहिन, मणिकुण्डल हो सन्त।
राम अयोध्या आ गये, कर रावण का अन्त।।
मणिकुण्डल को मिल गया, महापुरी का राज।
रानी संग त्वम् चरण रज, लेंगे हम सब आज।।
चारों ने साष्टांग दण्डवत अरु चरणामृत पान किया।
सफल हुआ जीवन हम सबका, ऐसा कह श्री गान किया।।

राम वन्दना

अखिल जगत में गुंजित नभ में, सप्तवलय चिर तृप्त भाव से।
करे सकल ब्रह्माण्ड प्रज्वलित, आदर्शों के दीप चाव से।।

दर्शन, श्रवण, मनन से जिनके,
सकल मनोरथ होते पूर्ण।
भवसागर के कुशल खेवैया,
भवकष्टों का करते चूर्ण।। १ ।।

जिनसे मिलने की अभिलाषा,
सदा हृदय में रहती है।
जिनको पाने की प्रत्याशा,
जन-जन मन में रहती है।।

जन गण मन के अधिनायक हो,
अभिभावक हो सकल जगत के।
जीवन के पर्याय प्राण हो,
शाश्वत हो तुम सदा त्रिगत के।। २ ।।

कर्ता, कर्म, निषेध, व्यवस्था,
साधन, बाधाओं के रूप।
जीवन है पर्याय जगत का,
सतत शाश्वत चल अभिरूप।।

अक्षय स्रोत, ओज, ऊर्जा के,

निस्पन्दन में हो स्पन्द।

वायु, ठोस, द्रव, ध्वनि, प्रकाश,

में मूल तत्व बन रहते बन्द।। ३ ।।

अणु परमाणु बने तुमसे ही,

गठन, विखण्डन के आधार।

परिवर्तन हो रहा रूप का,

जीवन खेल प्रमाण प्रकार।।

हो अनन्त, अविनाशी, अक्षुण्ण,

अगण, असीम, अमोल, अपार।

शिव अरु अशिव सभी कुछ तू ही,

निराकार, साकार, प्रकार।। ४ ।।

प्रेरक, ध्येयक और नियामक,

तू ही अन्ध, प्रकाश प्रदाता।

भावों के सागर में तू ही,

तू ही ध्वनि अरु शान्ति प्रदाता।।

अमल, ज्ञान, विज्ञान, अविद्या,

विद्या, सूक्ष्म, प्रसार स्वरूप।

जग में जो कुछ है बस तू ही,

ना बिन तेरे कोई रूप।। ५ ।।

मुझमें तू ही, मैं भी तू ही,

तू ही है तेरा हर रूप।

जड़, चेतन, क्षिति, अन्तरिक्ष में,

तेरे विविध-विविध क्यों रूप।।

तुम्हीं कल्पना, परेकल्पना,

अवर्णनीय हो और विशाल।

वर्णन के भी हेतु तुम्हीं हो,

वर्णन का फैलाया जाल।। ६ ।।

इस प्रकार प्रभु राम का वन्दन करके आज।
धन्य हुये संग अवधजन मणिकुण्डल महराज।।

हे राम रूप, हे राम नाम, बनकर कृपालु तुम कृपा करो।
मम हृदय बसो बन रामभक्ति, तुम हमको बारम्बार वरो।।
प्रभू राम ने हृदय लगाकर, मणिकुण्डल को आशीष वरो।
बिना शस्त्र तुम चक्रवर्ति बन, सत्य धर्ममय राज करो।।

पीताम्बर, पीताम्बरा, पालक सिद्धि प्रदात।
विष्णु महाविद्या मिले, कोटिश युग शुभ दात।।

मणिकौशल को राम नमन कर, कहते पिता तुल्य हैं आप।
मणिकुण्डल को दिल से आशीष दे हर लेते हैं सब श्राप।।

प्रभु श्री राम के दरबार में आशीर्वाद लेते श्री मणिकुण्डल परिवार

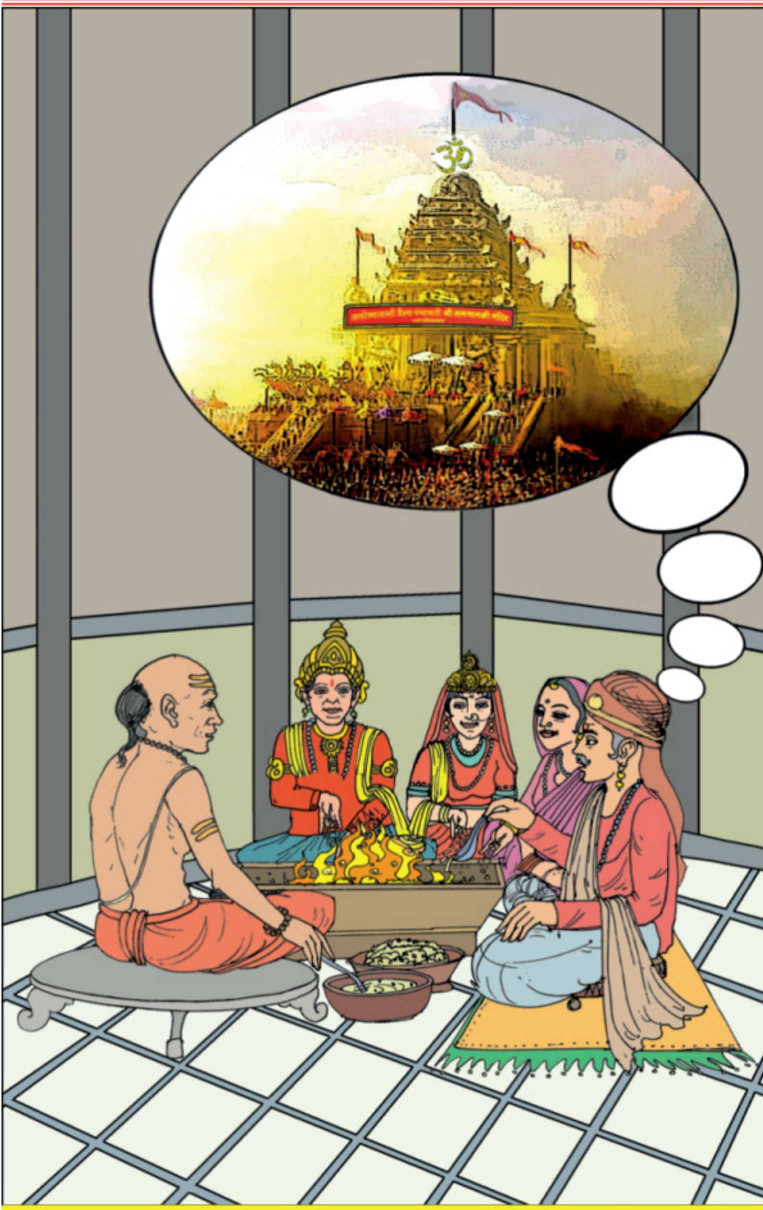

अयोध्या स्थित मणिकुण्डल जन्मस्थली पर कलियुग
में भव्य मन्दिर निर्माण हेतु यज्ञ करते मणिकुण्डल परिवार

अष्ठम् सर्ग

फलश्रुति पर्व

मानवः भवति यशवान वरिष्ठानाम् आशीर्वादेण।
अद्दात गुरू वशिष्ठः आशीर्वादं मणिकुण्डल जन्मस्थले।।
अयोध्यायाम् तस्य वंशजे मन्दिर निर्माणम् कलियुगे।
तत्र वंशजम् अवश्य गच्छेषु तत्र (मन्दिर) दर्शनाय।।
कष्टकारी भूत्वाऽपि संघर्षस्य पथं भवति साफल्यदायी।
राष्ट्रवाद, धर्मरक्षा, संस्कृति, प्रकृति-प्रेम, संघ-शक्ती।।
साहित्य, क्रीड़ा, सर्व वर्ग हित विकासस्य भावना राजा भूत्वाऽपि।
मणिकुण्डल अस्ति कुशल शासक महामानवस्य च।।

मणिकुण्डल चरित्र चित्रण

जीवन की उद्याम लालसा,
का जिसमें हो ज्वार भरा।
जिसने जीवन में कुछ करने,
का पावन अभिसार भरा।।
भरा हुआ है जो भावों से,
सद्भावों के अभिनव रूप।
दिव्य भावनाओं का वर्धन,
ही अभीष्ट हो सतत स्वरूप।।
जिसने परहित प्रेम-पताका,
द्वेष विजय कर फहराई।
जिसने मानवता के खातिर,
लोभ, लाभ, मद ठुकराई।।
क्षणिक, दीर्घ, सुख पाकर जिसने,
धन्यवाद प्रभु का कीन्हा।
व्यसन युक्त अरु सच्चरित्र,
का बीज सदा जिसने चीन्हा।।
व्यसन वासना का दुर्गुण भी,
तनिक नहीं जिसको छू पाया।
जिसके मन में पाप तनिक ना,
पर फिर भी प्रायश्चित भर आया।।
जिसने सदा राम के खातिर,
जीवन का उत्सर्ग किया।

राम दरश हित वन-वन भटका,
कष्टों को स्वीकार किया।।
उसके जीवन में बस प्रभु थे,
उन पर ही विश्वास किया।
सोते जगते मौन बोलते,
राम-राम का जाप किया।।
अंधकार को कर विकीर्ण,
जो उजियारा अद्भुत लाया।
कार्य और आस्था के बल पर,
उसने प्रभु दर्शन पाया।।
संघर्षों का जीवन जीकर,
विष में ही अमृतपान किया।
कण्टक मार्गों पर चलकर भी,
पुष्पों का ही अनुमान किया।।
जो नहीं डरा उत्पातों से,
जिसने नैतिक पथ थाम लिया।
जिसने अपने प्रिय राम हेतु,
धन, सुख, वैभव बलिदान किया।।
प्रतिकूल हवा के तूफाँ को,
जिसने हंसकर के टाल दिया।
जिसने मर्यादा के खातिर,
हर मूल्य चुकाना ठान लिया।।
जिसके भावों का महासमद,
ले रहा ज्वार प्रभु-भक्ती का।

जिसके अर्न्तमन राम बसे,
वह स्वयं रूप है भक्ती का।।
जो सत्य, धर्म, नैतिकता की,
प्रतिमूर्ति स्वयं बनकर उभरा।
है श्रेष्ठ अहिंसा मार्ग अटल,
हिंसा से सदा जगत बिखरा।।
वेदों, शास्त्रों, वैद्यक, आयुष,
ज्योतिष, खगोल, नक्षत्र ज्ञान।
जिसमें था ज्ञान अपार भरा,
सर्वांग योग विज्ञान ध्यान।।
जो छल प्रपंच से दूर सदा,
रहकर प्रेरित करता जग को।
ऐसे प्रभु प्रेमी का वन्दन,
करके सुख मिलता है मन को।।
उस दिव्य पुरुष का कथन मात्र,
अमृतवाणी बन जाती है।
प्रभु प्रेम शक्ति कुछ ऐसी है,
जो चमत्कार दिखलाती है।।

मणिकुण्डल व्यक्तित्व लख, प्रभु भये अधिक उदार।
अन्तर्मन आशीष दे, करते हिय सुविचार।।
हनुमान सम भक्त हो देता हूँ आशीष।
चक्रवृर्ति सम्राट बन, अवध वैश्य कुलधीश।।
दिव्य राम दरबार में यूं पाकर रामाशीष।
मणिकुण्डल प्रमुदित भये सफल कियो जगदीश।।

सीता के चरनन पड़ी, पुत्रवधू के संग।
महरूपा शाकम्भरी, बन सीता के अंग।।
माँ सीता बोली तभी, रखो हृदय विश्वास।
सुख, सौभाग्य अखण्ड हो, यही हमारी आस।।
पुत्र, पौत्र अरु राज्य भी होवे कीर्ति महान।
अवध वैश्य गौरव बनें, मणिकुण्डल श्रीमान।।
ब्रह्मा, शिव, नारद सहित, श्रीवर गरुड़ प्रणाम।
भरत, लखन, शत्रुघ्न को चारों करें प्रणाम।।
उर्मि, माण्डवी, कीर्तिश्रुति को सादर के साथ।
पुनि-पुनि शतत प्रणाम है, रखना सिर पर हाथ।।
राजगुरू के चरण छू, झंकृत विद्युत तार।
गुरु वशिष्ट आभा नमन, वर मांगे दुइ चार।।
राजगुरु वशिष्ट श्री, लखत त्रिकाल उवाच।
मणिकुण्डल जन्म स्थली, मन्दिर वृहत सुवाच।।
राम कोट का क्षेत्र यह, हनुमान गढ़ी के पास।
कलियुग में वंशज तेरे, सरयू ओर प्रवास।।
बने राष्ट्र में राम जानकी मन्दिर अनगिन और।
तेरे वंशज रामभक्त बन सदा रहें सिरमौर।।
हनूमान को देखकर, मन हो गया अधीर।
मणिकुण्डल-सिर चरण पर, सदा हरो मम पीर।।

रामकाज के सफल विनायक, हे रामभक्ति दायक।
कोटिश प्रणाम करता, हे मुक्ति मार्ग दायक।।
संजीवनी न लाते, जीवन न हम भी पाते।
जीवन बचा लिया तो, जीवन दिखाओ प्राते।।
हनूमान जी ने कहा, मणिकुण्डल प्रिय भक्त।
राम और हनुमान का, तू है सच्चा भक्त।।
पौष पूर्णिमा व्रत रखे, या नित पूजन होय।
मणिकुण्डल आशीष से, कार्य सफल सिद्ध होय।।
हनुमत का वन्दन कियो, और लियो आशीष।
सकल राम दरबार में, सबै नवायो शीश।।
आकर अवध निवास में, पिता पुत्र थे प्रज्ञ।
पड़ोसी परिवार संग, किया वहीं पर यज्ञ।।
प्रथमहिं पूजन इस निमित, त्रेता में ही कर देव।
जन्मभूमि-मणि में बने, कलियुग मन्दिर एव।।
अयोध्यावासी वैश्य का, होगा जग में नाम।
सकल विश्व के अवधजन, आकर करें प्रणाम।।
सभी पड़ोसी को दिये, विविध विविध उपहार।
महपुर भी आना कभी, आमन्त्रण साभार।।
दृग भर नयन, अवध जब छोड़ा
महापुरी को रथ था मोड़ा।

शीघ्र- शीघ्र रथ बढ़ता जाये,
दायित्व एहसास दिलाये।।
मन में था उल्लास, प्रभू का दर्शन पाया।
शाश्वत सत्तानायक ने था, गले लगाया।।
चिन्तन मणिकुण्डल करें, स्वजन बसे कहिं और।
रामदरश वंचित रहे, मणिकुण्डल सोचे और।।
मैंने काँटों और कंकड़ पर, चलकर अपनी राह बना ली।
तुम फूलों की बाट जोहते, घर में बैठे हो वनमाली।।
प्राप्त सहज सम्भव हो सब कुछ, यह अभिलाषा नहीं रही।
संघर्षों, श्रम से अर्जित हो, सदा भावना यही रही।।
ईश-कृपा से सब कुछ पाया, तुम पा लोगे यदि चाहोगे।
सच्चरित्र कर्तव्यवान बन, श्रम सिंचित हर सुख पाओगे।।
छोड़ बिछौना आलस वाला, जिसने प्रस्तर खाट बिछा ली।
बजरंगी की कृपा मिली है, बना मुकद्दर का बलशाली।।
खेत और खलिहान प्रफुल्लित, नभ तक मानव की दस्तक है।
वेद, ज्ञान, विज्ञान, ध्यान से, ऊँचा हर मानव मस्तक है।।
लक्ष वर्ष के श्रम सिंचन से, आप्लावित यह धरा मिली है।
अपना अंशदान कर चातक, पावन भारतभूमि मिली है।।
राजा, ऋषी, वीर, विद्वानों, मेहनत कश ने दीप जला ली।
राष्ट्रभक्ति का भाव नहीं यदि, मना सकोगे क्या दीवाली।।

मन मन्थन चलता रहा, आर्यावर्त पुनीत।
देव दुर्लभ राष्ट्र से, स्वर्णिम भारत प्रीत।।
जगत् लोक कल्याण का, सदा रखूंगा भाव।
दुर्गुण देश समाज के, नष्ट करूं यह चाव।।

पर्यावरण, प्रदूषण मुक्ती, जीव रक्ष का कर संकल्प।
प्रकृति प्रेम अरु जनहित में, वृक्षारोपण का नहीं विकल्प।।
क्षेत्रवाद का भाव नष्ट कर राष्ट्रवाद का करें विचार।
मां भारत की रक्षा खातिर, जिसके मन मे हो उद्गार।।
दुष्टों का भी शमन प्रभावी, वाणी से कर ले तत्काल।
बिना शस्त्र के चक्रव्रर्ती बन, करें राज्य को सुखद सुमाल।।
स्वर्ण पक्षी है रहा, विख्यात जो सारे जगत में।
स्वर्ण अक्षर में लिखा, इतिहास है जिनका विगत में।।
स्वर्ण केवल धन नही, स्वर्णिम रहे संस्कार जिनमें।
स्वर्ण सा साहित्य, संस्कृति, सभ्यता का दीप जिनमें।।
स्वर्ण सा है सूर्य स्वर्णिम, है कृषक का श्रम फला।
स्वर्ण सा है मौन स्वर्णिम, हैं ऋचायें उज्जवला।।
स्वर्ण भारत हो सका जब, स्वयं ही युग पुरूष जन्मे।
व्यक्तित्व को बहु विधि नमन, भाव श्रद्धा रखे मन में।।
राष्ट्र-प्रेम का भाव जगाकर, संस्कारों का कोष बनाने।
मणिकुण्डल तब सहज भाव से, लगे गीत इक गुनगुनाने।।
संस्कृति के सद्-निर्माणों हेतु, देश की रक्षा का व्रत ठान।

समर्पण करते हैं निज प्रान, बढ़ाने को माता की शान।।
पर्वतों से टकराकर आज, गलाकर हिम प्रशस्त हो मार्ग।
स्वास्थ्य रक्षा के माध्यम आज, ज्ञात हम कर लेवें सन्मार्ग।।
धर्म अरु देश, जाति का मान, करें सम्मान हृदय में ग्राह्य।
सुशीतल होगा पूर्ण समाज, शुद्ध मन होगा अन्तर वाह्य।।
धर्म की रक्षा में चिर लीन, बढ़ाने राष्ट्र भाव सम्मान।
समर्पण करते हैं निज प्रान, बढ़ाने को माता की शान।।
सत्य ही ध्येय, धर्म सर्वस्य, प्रेम का मन्त्र जगावें आज।
शान्ति का भाव हृदय में ग्राह्य, ऐक्य का त्वरित बजावें साज।।
न्याय पथ के बन पथिक अथक, करें हम पुनः राष्ट्र उत्थान।
समर्पण करते हैं निज प्रान, बढ़ाने को माता की शान।।
संघ की शक्ति ज्ञात कर आज, संगठित हो जावें कर आश।
औदार्य भावों से होकर युक्त, सुहृदयता का हम करें प्रकाश।।
विश्व बन्धुत्व मात्र ही ज्ञान, करें हम स्वयं चरित निर्मान।
समर्पण करते हैं निज प्रान, बढ़ाने को माता की शान।।
संस्कृति के सद्निर्माणों हेतु, देश की रक्षा का व्रत ठान।
समर्पण करते हैं निज प्रान, बढ़ाने को माता की शान।।"

यह भाँति सोचते मणिकुण्डल,
रथ तीव्र चल रहा महपुर को।
अनुभूति सुखद, संकल्प प्रखर,
दायित्व निखरता है उर को।।

नवदीप जलें, जलते ही रहें।
नवप्रीत मिलें, मिलते ही रहें।।
नवगीत लिखें, लिखते ही रहें।
नवमीत मिले, मिलते ही रहें।।
जब भाव विभोर हुये कवि भी।
जब प्रेम मयूर हुये रवि भी।।
जब सौम्य सुधीर बनी छवि भी।
जब रुद्र प्रचण्ड हुये हवि भी।।
जब दीप प्रकाश करे रवि को।
दर्पण प्रतिबिम्ब करे शशि को।।
हवि अग्नि कहे दावानल सों।
जठराग्नि कहें बड़वानल सो।।
ईर्ष्याग्नि बुझाये बुझे न कभी।
तन प्राण विलग होने पर भी।।
प्रभु भक्ति प्रकाश करें मन में।
सुख शान्ति नगर व रहे वन में।।

महापुरी में पहुंचकर, धर्मरूप बन राज।
मणिकुण्डल करने लगे, सकल राज के काज।।
राजकाज करते हुये, मणिकुण्डल कह आज।
ध्यान राम रखना सदा, पूरन होंगे काज।।

शासन के अष्टांग सुदृढ़ हों, जगता का हो प्रेम प्रकाश।
राजा प्रजा परस्पर पूरक, जल भूतल दिखते आकाश।।
षष्ठ चतुर्दश हिम तापित हो, जल स्वरूप ही ग्रहण करें।
कुंठित हो शतवायु स्वयं, भव सिन्धु पार बन नीर तरें।।

यह अनन्त सा व्योम और विस्तृत, भूतल की सी छाया।
क्षितिज पर मिलन दिखाकर के, है ऐक्यभाव को बतलाया।।
रक्षा, शिक्षा, खेल, चिकित्सा, कोष, कृषि, उद्योग, व्यापार।
नीति, गुप्तचर, विद्वत, वन्दन से, समृद्ध हो राष्ट्र अपार।।
मणिकुण्डल मन्थन करके भावी, सुत का चित्रण कर मनमाहिं।
मनोभावना में पति पत्नी, डूबे उतराते क्षण माहिं।।
कैसा हो मानव जीवन में, भावी चेतनता का स्वरूप।
हिमगिरि अंचल में निर्झर झर, होता है भावी नद स्वरूप।।
राजकाज दायित्व मानकर, मणिकुण्डल कर गम्भीर विचार।
हो सुधार कल्याण लोक का, करते बारम्बार विचार।।

व्यष्टि ने जब-जब समष्टि भाव से,
कार्य का संकल्प दृढ़तम ले लिया।
मार्ग में बाधायें अनेकों हो भले,
पर सफलता ध्वज को हासिल कर लिया।।
सामूहिक विवाह के प्रथम प्रवर्तक राम।
निर्दहेज के भाव से रच दूं ऐसा काम।।
अपव्यय धन आदि का, विलग किया तत्काल।
सहज सादगी प्रथा को, प्रेरित कर श्रीमाल।।
पाठीपूजा, यज्ञोपवति या फिर होय विवाह।
सामूहिक आयोजन द्वारा आया नव उत्साह।।
प्राणायाम, विपश्यना, ध्यान योग सिद्धहस्त।
सकल राज्य लागू किया, कर सबको अभ्यस्त।।

कृषक, श्रमिक, व्यापारी, शिक्षक, सबका कैसे हो कल्यान।
जन-जन के सुख वर्धन खातिर, रात दिवस करते सन्धान।।

सुदृढ़ सेना की रचना अरु, गुप्त-तन्त्र का रचे विधान।
पूर्ण सुरक्षित, हर्षित महपुर, कुशल राज्य शासक प्रतिमान।।
दीर्घ, क्षुद्र आपद में जन संग, जन सेवक का भी रख ध्यान।
विष्णु भाव में भक्ति राम की, लेकर करते जनता सम्मान।।
साहित्यकार, विद्वान राज्य के, राजकोष से लेकर सम्मान।
चर्तुवर्ष में क्रीड़ा-संगम, अखिल विश्व का सौम्य विधान।।
शास्त्रार्थ या शौर्य प्रदर्शन, शस्त्र, शास्त्र दोनों का मान।
जन-जन में कल्याण भाव में, सबके जीते दिल अरूप्रान।।
खुशहाली हरियाली फैले, अखिल राष्ट्र का बन कीर्तिमान।
महापुरी की यश-यश गाथा, फैले चहुदिश बन परिणाम।।
संस्कार युक्त नवपीढ़ी कर, धर्म नीति का हो आयाम।
सुखी और समृद्ध सकल जन, एक ईष्ट मेरे प्रभु राम।।
जिसने उनका दामन थामा, जिसने उनका विश्वास किया।
परिपूर्ण हुआ मनवांछित यदि, श्रद्धा से उसने काज किया।।
है यही भरोसा ईशशक्ति, जिसके बल दुनिया चलती है।
है श्रेष्ठ वही जो दीप बने, देने प्रकाश लौ जलती है।।
ना रूठो-रुको, हताश न हो, मंजिल तो एक दिन मिलनी है।
आदर्शों की ले रवी-रश्मि, निज लक्ष्य वाटिका खिलनी है।।
बस रहो सजग कर्तव्यनिष्ठ, मेहनत से सब कुछ पा लोगे।
विश्वास हृदय में रखकर ही, जो चाहोगे वो पा लोगे।।

राजकार्य करते हुये, महरूपा के साथ।
मणि, माणिक सुत जनम ले, बढ़ा वंश का हाथ।

मणिकौशल शाकम्भरी, रूपा,
महाबली, मणिकुण्डल उल्लास।
नवपीढ़ी के सुखद आगमन
से सकल देश में सुखद विलास।।

वन्दन, चन्दन, दीप मालिका,
सुयशगीत के गान प्रवाह।
हर्ष, प्रेम उत्सव से होता,
अखिल राष्ट्र गुणगान उछाह।।

पुनः नमन गणाधिपति, सरस्वती, हनुमान।
बद्री विष्णू रूप में, पीताम्बर धर ध्यान।।
माँ पीताम्बरा अशीष से, पूर्ण मनोरथ आन।
वैशाख शुक्ल गुरु सप्तमी, पुण्य योग शुभ मान।।
दो हजार ससत्तर संवत्, ग्रन्थपूर्ण भयो आज।
मणिकुण्डल आशीष पा, होते सबके काज।।
सकल सुमंगल यह कथा, उमाशंकर लिख आज।
त्रुटियाँ भूल बिसार कर, क्षमा करो पठराज।।

।। माहात्म्य ।।

मणिकुण्डलस्य कीर्तनस्य इतीदं महामानवः।
शतनाम्ना सिद्धानाम् शेषणे प्रकीर्तितम्।।
सर्व शोक, भय, मनस्तापा नश्यन्तु सर्वदा।
आयुर्विद्या, तेज, वीर्यश्च धर्म, अर्थ माप्युनात्।।
न केवलं वैश्य अपितु ब्राहमण, क्षत्रिय, शूद्रश्च।
सर्वलोके सुख समृद्धिः धनः यश माप्युनात्।।
इन्द्रियाणि मनोबुद्धि भक्ति सत्वम् बलम् धृतिः।
सत्कामम् पवित्रम् मुक्तिः प्रदाय वंशवर्धकाय नमः।।

श्री मणिकुण्डल जी की आरती

ऊँ जय मणिकुण्डल जी, स्वामी जय मणिकुण्डल जी ।
यश, धन, बुद्धि प्रदाता, राम भक्ति बल जी ।। ऊँ .....
गौर वर्ण, मुख आभा, पीताम्बरधारी। स्वामी....
रत्न जड़ित सिंहासन पर, भी ईश ध्यानधारी।। ऊँ .....
तुम हो वैश्य शिरोमणि, सबके हित कर्ता। स्वामी....
सत्य, धर्म, अनुरागी, मम संकट हर्ता।। ऊँ .....
इतिहास-पुराण बखाने, महिमा गुण गायें। स्वामी....
अवध महापुर नगरी भी गौरव गायें।। ऊँ .....
जीवन दीप हमारे, आदिपुरुष श्रीवर। स्वामी....
मुक्तहस्त दो हमको परहित भाव प्रवर।। ऊँ .....
हम वंशज तुम पूर्वज, सुख दायक प्रतिपाल। स्वामी....
कृपा करो संतानों पर वे बने रहें खुशहाल।। ऊँ .....
मम मन के दोष हटाओ, प्रेम बढ़े जग में। स्वामी....
दिव्य प्रकाश दिखाओं, सदा कठिन मग में।। ऊँ .....
श्री मणिकुण्डल आरती, जो कोई गावे। स्वामी....
सिद्धि, भक्ति, सुख सम्पत्ति, जी भरकर पावे।। ऊँ .....

अयोध्यास्थित मन्दिर में विराजमान
श्री मणिकुण्डल प्रतिमा

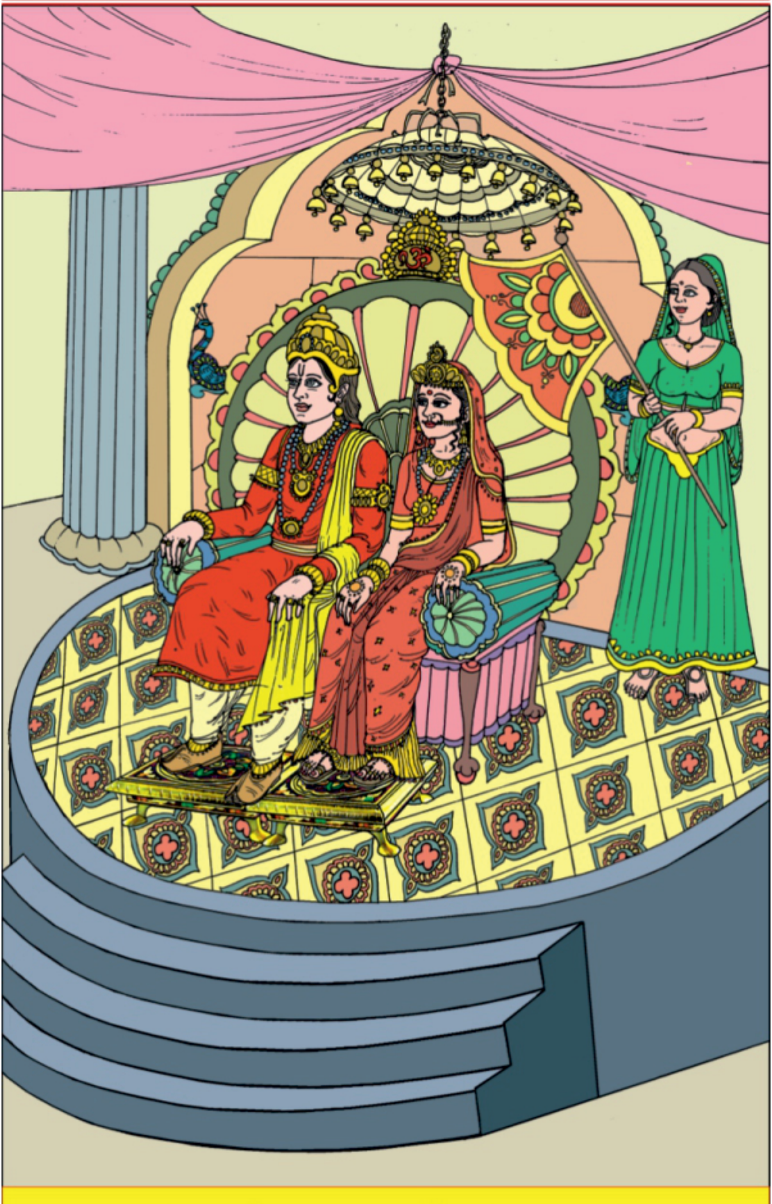

महापुर में शासन करते हुए महाराजा
मणिकुण्डल जी व रानी महारूपा